AIDWA

विषय-सूची

1. संपादकीय

2. 28 अगस्त: जीवन के बुनियादी सवालों पर एडवा की लाखों महिलाएं देशभर की सड़कों पर उतरीं

मरियम धवले (राष्ट्रीय महासचिव, एडवा)

3. स्वामी अग्निवेश जी – श्रद्धांजलि

जगमती सांगवान (राष्ट्रीय उपाध्यक्ष, एडवा)

4. पुरस्कार वापसी आंदोलन के पांच साल

आशुतोष भारद्वाज (पत्रकार, लेखक)

5. साहित्य और कला की दुनिया से – महादेवी वर्मा, गजाननमाधव, मक़बूल फिदा हुसैन, मुक्तिबोध, अवतार सिंह संधु 'पाश'

6. लॉकडाउन में डिजिटल स्कूली शिक्षा की विफलता : एक अध्ययन

7. जनता की बदहाली और तबाही से बेखबर सरकार

सुभाषिनी अली (राष्ट्रीय उपाध्यक्ष, एडवा)

8. मैंने उनसे महंगाई, बेरोजगारी, किसानों की बात की तो वे मुझे न्यूज़ चैनल्स की बंदरछाप न्यूज़ बताने लगे...

मिथुन प्रजापति

9. मैं यूपी छोड़ रहा हुँ, मेरी गाड़ी भी पलट सकती थी

ज़ाकिर अली त्यागी (पत्रकार, एवं एक्टिविस्ट)

10. राजनैतिक आका लोग किस प्रकार दंगे के मामलों में दिल्ली पुलिस को नचा रहे हैं

जुलिओ रिबेइरो (IPS)

11. प्रशान्त भूषण के मामले का महत्व

सुभाषिनी अली (सौजन्य – फेसबुक लाइव)

12. मानव श्रम और औरत के स्वभाव में बसे संगीत का महत्व बताती वेब सीरीज 'बंदिश बैंडिट्स'

संध्या शैली (सदस्य, एडवा केन्द्रीय कमेटी)

13. फिल्म 'शकुन्तला देवी', स्थापित परम्पराओं को चुनौती देती एक असाधारण औरत की कहानी

मधु गर्ग (सदस्य, एडवा केन्द्रीय कमेटी)

14. मध्य प्रदेश सरकार का कुपोषित बच्चों पर वार

नीना शर्मा (एडवा, प्रदेश अध्यक्ष-मध्य प्रदेश)

15. मुजफ्फरपुर बालिका गृह कांड : न्याय की लम्बी लड़ाई

निवेदिता (पत्रकार और लेखिका)

16. 'लवजिहाद' के नाम पर उत्पीड़न

नीलम तिवारी (सचिव, एडवा, उत्तर प्रदेश)

संपादकीय

सितंबर के महीने का अंत संघर्षो के साथ हो रहा है। किसानों का आंदोलन पंजाब, हरियाणा, उत्तर प्रदेश के कई हिस्से और कर्नाटक मे फूट चुका है। हजारों किसान सड़को और रेल की पटरियों को जाम करके बैठे हैं और हटने का नाम नहीं ले रहे हैं। उनका आक्रोश स्वाभाविक और उचित है।

14 सितंबर को संसद का 'बरसाती सत्र' शुरू हुआ था। जनता के तमाम मुद्दों को उठाने के लिए, सरकार को जवाब देने के लिए मजबूर करने के लिए और करोड़ों बेरोजगार, भुखमरी के शिकार परिवारों को राहत दिलवाने के लिए तमाम सांसद दिल्ली पहुंचे। बहुत जल्द उन्हे पता चल गया कि सरकार कुछ बताने या जनता को कुछ देने के लिए तयार नहीं थी। उसका अजेंडा तो कुछ और ही था।

कोरोना की महामारी से निबटने मे अपनी राजनैतिक प्राथमिकताओं के चलते जनता के स्वास्थ्य और खुशहाली के प्रति सरकार की सम्पूर्ण उदासीनता के चलते उसकी ज़बरदस्त विफलता संसद में चर्चा का बड़ा मुद्दा था लेकिन सरकार ने उसे यह कह कर टाल दिया की मौते तो कम ही हुई थी। इस महामारी से पैदा बेरोजगारी के बारे मे उसने कहा की उसे कुछ पता ही नहीं है। इसी तरह से सरकार ने बड़ी बेशर्मी के साथ प्रवासी मजदूरों की मौतों के बारे मे भी यही कहा कि उसे कुछ पता नहीं। हर अहम सवाल का सरकार का यही उत्तर था। कितने डाक्टर मरे? पता नहीं। कितने किसानों ने आत्म हत्या की? पता नहीं? कितनी बच्चियों की पढ़ाई छूट गयी? पता नहीं।

दरअसल, संसद का सत्र सरकार ने जनता की परेशानियों को कम करने के लिए नहीं उन्हे और अधिक बढ़ाने के लिए ही बुलाया था। उसका मकसद था कई अध्यादेशों को कानूनी रूप देना और कई क़ानूनों मे संशोधन करना।

किसानों पर ज़बरदस्त कानूनी गाज गिरी। उनके उपज की खरीद से अपना पल्ला झाड़ते हुए, सरकार ने फसल की खरीद को निजी बाज़ार के लिए पूरी तरह से खोल दिया। यह जगजाहिर बात है कि किसान की सबसे बड़ी मजबूरी है कि उसे अपनी फसल की बिक्री उसके कटने के बाद जल्द से जल्द करनी होती है। उसके ऊपर कर्जा चुकाने का और तमाम भुगतान करने का बहुत दबाव होता है। यही नहीं, उसके पास फसल का भंडारण करने और उसे खराब होने से बचाने के साधन भी नहीं हैं। इसलिए देश भर के किसान लगातार एक ही मांग उठा रहे हैं – स्वामीनाथन आयोग के अनुसार उन्हें अपनी फसल का उचित भाव मिलना चाहिए। और यही करने के लिए सरकार तैयार नहीं है। कई सालों से किसान की फसलो की खरीद कम होती जा रही है। आंदोलन के बाद ही खरीद होती है। अब, नया कानून पारित करके, यह रास्ता भी बंद कर दिया गया है। अभी, सरकार द्वारा न्यूनतम खरीद मूल्य (MSP) की घोषणा के चलते, किसानों से खरीदने वाले व्यापारियों और कंपनियों पर थोड़ा बहुत दबाव है लेकिन जब फसल की खरीद पूरी तरह से बाज़ार के लिए खुल जाएगी तो कंपनियाँ ही उसके दाम को तय

करेंगे। यही नहीं, इस कानून के फलस्वरूप, मंडियों मे काम पाने वाले लाखों गरीब ग्रामीण बेरोजगार लोगों का काम भी छिन जाएगा।

इस संदर्भ में बता दें कि नितीश कुमार ने 2006 मे बिहार के अंदर किसानो की फसलों की खरीद को बाज़ार के हवाले करने का काम किया था। इसका नतीजा है कि तब से आज तक बिहार के किसानों को MSP से बहुत कम भाव पर अपनी फसल बेचनी पड़ी है। जब नितीश कुमार से पूछा गया कि मंडियों की समाप्ति के बाद, वहाँ काम करने वालों का क्या हुआ तो उन्होने झूठ बोलते हुए कहा कि उनके वैकल्पिक रोजगार का इंतेजाम कर दिया गया है। सच्चाई तो यह है की केवल पंजाब की मंडियों मे ही 4 लाख से अधिक बिहारी मजदूर काम करने हर साल पहुँचते हैं। इन मंडियों मे लाखों गरीब महिलाएं अनाज की सफाई का काम करती हैं। जिन दानों को वे बीनती हैं, उन्ही से उनका और उनके परिवार के लोगों का पेट भरता है। जो बचता है उसे वे बेच देती हैं। अब नए कानून के क्रियान्वयन से जहां किसान की बदहाली बढ़ेगी, वहीं गरीब मजदूर कंगाल बन जाएंगे।

सरकार ने आवश्यक वस्तु अधिनियम में भी संशोधन करके उसकी परिधि से दाल, आलू और प्याज़ को बाहर कर दिया है। इसका मतलब है कि किसान से बड़ी कंपनियाँ यह चीज़ें कम दाम पर खरीदकर इनकी जमाखोरी करने के लिए स्वतंत्र हैं और, मुँहमाँगे दामों पर बेच सकते हैं।

इन किसान विरोधी क़ानूनों को पारित करने के साथ-साथ, सरकार ने श्रम क़ानूनों में भी संशोधन करके 300 से कम श्रमिकों के कारखानों के मालिकों को उनकी बिना अनुमति बैठकी/ छंटनी करने के लिए आज़ादी दे दी है। इसका मतलब है किअब श्रमिक मालिको की दया-माया पर काम करेंगे। यही नहीं, श्रमिकों और महिला श्रमिकों की खास तौर से तमाम सामाजिक सुरक्षाएँ अब सुरक्षित नहीं रहेंगी।

सरकार बड़े कारपोरेट को फायदा पहुंचाने पर कितनी उतावली है, उसका पता इस बात से चलता है कि उसने इन तमाम कानूनी कार्यवाहियों को अंजाम देने के लिए किस हद तक संवैधानिक और जनतान्त्रिक नियमों को रौंदने का काम किया है। चर्चा और बहस की अनुमति का सवाल नहीं; कमेटियों के पास इन महत्वपूर्ण कानूनों को भेजने का सवाल नहीं; राज्य सभा मे सांसदों को वोट देने का भी सवाल नहीं। जब सीपीआईएम के सांसद, रांगेश, ने मांग की कि किसान विरोधी कानून पर मत विभाजन हो तो इसकी अनुमति, जिसका दिया जाना अनिवार्य है, नहीं दी गयी और 'हाँ' 'ना' कहलवाकर और फिर 'हाँ' कहने वालों के बहुमत मे होने की घोषणा करके इन कानूनों को पारित किया गया। सरकार जानती थी कि मत विभाजन में उसके लिए खतरा पैदा होता तो उसने तमाम जनवादी नियमों पर बुलडोजर चलाकर किसानों और गरीबों के अधिकारों को रौंदने का काम किया।

सरकार की नीतियों के खिलाफ किसानों का आक्रोश फूट पड़ा है। AIDWA ने भी इस आंदोलन का तहे दिल से समर्थन करने का फैसला कर दिया है।

सरकार का रुख अभी बदला नहीं है। विरोध और आलोचना का सामना वह दमन से ही कर रही है। विपक्ष के नए तेवर से निबटने के लिए वह रोज़ नए नाम दिल्ली हिंसा के साथ जोड़ने का काम कर रही है। सीपीआई(एम) के नेता सीताराम येचूरी और ब्रिन्दा कारत, सीपीआईएमएल की कवित कृष्णनन, कांग्रेस के सलमान खुर्शीद, आप पार्टी के अमानतुल्लाह खान, स्वराज पार्टी के योगेन्द्र यादव के साथ तमाम बुद्धजीवियों के नाम लगातार जोड़े जा रहे हैं; उमर खालिद जैसे नौजवानों की गिरफ्तारी हो रही है। भीमा कोरेगाँव के मामले मे वरिष्ठ कार्यकर्ताओं की जमानत की सुनवाई ही नहीं हो रही है और कई प्राध्यापक और सांस्कृतिक कर्मियों की गिरफ्तारी भी हो रही है।

लेकिन विरोध अब सुनाई और दिखाई दे रहा है। और आने वाले दिनों मे, यह बढ़ेगा; और सुनाई देगा; और दिखाई देगा।

28 अगस्त : जीवन के बुनियादी सवालों पर एडवा की लाखों महिलाएं देशभर की सड़कों पर उतरीं

मरियम धवले

2020 को हमारे देश की जनता पीढियों तक याद रखेगी। यह साल देश के केवल 10 प्रतिशत अमीर लोगों को छोड़कर बाकी पूरे देश के लिये सबसे बुरा समय रहा है। यह वह साल हे जिसमें कोरोना महामारी के बीच भी गरीबों के प्रति केंद्र सरकार की असंवेदनशीलता और हृदयहीनता पूरी तरह से उजागर हो गयी है। एक दम्भी और अहंकारी सरकार जो अपनी खुद की जनता के प्रति कोई जवाबदेही नहीं मानती है।

गरीब और हाशिये पर पडे लोग अभी भी अपनी जिंदगियों के बिखरे हुये टुकड़ों को समेटने में लगे हैं। कोविड 19 के अभूतपूर्व उभार ने जो बाधायें पैदा की हैं उनसे उबर कर हर कोई अपनी रोजमर्रा की जिंदगी को व्यवस्थित करने के तौर तरीके तलाशने की कोशिश कर रहा है। महिलाओं की जिंदगियों पर जो तबाही बरपा हुयी हैं उनकी कहानियां दिल दहला देने वाली हें। ऐसा कोई थर्मामीटर नहीं है जो बीमारी और मौतों के बीच भूख से पीड़ित चेहरों की पीड़ा और इन महिलाओं के द्वारा दो वक्त की रोटी जुटाने के लिये झेले जाने वाले दबावों को नाप सके।

शारिरिक दूरी बनाये रखने के चलते जन लामबंदियों के प्रतिबंधित होने से एडवा विभिन्न तरीकों से इन भारी चुनौतियों का मुकाबला करने की कोशिश कर रही है। कई स्थानों पर महिलाओं को उनके परिवार वालों ने ही

कोरोना के डर के चलते बाहर जाने से रोक दिया है। फिर भी स्थिति की मांग यह है कि सरकार को जवाबदेह ठहराने के लिये विरोध प्रदर्शनों का आयोजन किया जाये। महिलाओं को जब भी ऐसे किसी प्रदर्शन में भाग लेने का मौका मिलता है तो उनका गुस्सा और हताशा देखने लायक होते हैं। इस बेहद मुश्किल वक्त में एडवा की हजारों कार्यकर्तायें देश भर में शानदार काम कर रही हैं।

महिलाओं को विशाल संयुक्त देशव्यापी विरोध प्रदर्शन

शासक भाजपा निजाम के खिलाफ हमारे संघर्षों को मजबूत करने के लक्ष्य के साथ राष्ट्रीय स्तर पर और साथ ही राज्यों में भी समान सोच वाले महिला संगठनों के साथ संयुक्त कार्यवाहियों का आयोजन करने के लिये सचेत कदम उठाये जा रहे हैं।

छः राष्ट्रीय महिला संगठनों एडवा, एन एफ आई डब्ल्यू, ए आई एम एस एस, पी एम एस तथा एआईएम एस ने जीवनयापन तथा जनतांत्रिक अधिकारों के लिये गत 28 अगस्त को संयुक्त रूप् से देशव्यापी विरोध प्रदर्शनों का आयोजन किया।

इसमें ज्यादा जोर महिलाओं की अधिकतम भागीदारी के साथ स्थानीय स्तर पर विरोध प्रदर्शन आयोजित करने पर था। 28 अगस्त की इन कार्यवाहियों का जितना उत्साहपूर्ण समर्थन मिला उसने संयुक्त कार्यवाहियों की जरूररत को सामने ला दिया है। यह बहुत ही उत्साह वर्धक अनुभव रहा।

28 अगस्त की इस महत्वपूर्ण कार्यवाही में जो कि कोविड लॉकडाउन शुरू होने के बाद महिलाओं का सबसे बडा शक्ति प्रदर्शन था एडवा के झंडे तले देश के 23 राज्यों में आयोजित किये गये विरोध प्रदर्शनों में करीब एक लाख महिलाओं ने भाग लिया। दूसरे महिला संगठनों द्वारा की गयी लामबंदी इसके अतिरिक्त थी।

केरल ने विरोध प्रदर्शनों के मामलों में अगुआई की। यहां पर बूथस्तर पर महिलाओं की जबर्दस्त लामबंदी की गयी। राज्य भर में 20 ए 747 केंद्रों पर कुल 76 ए 534 महिलाओं ने इन विरोध कार्यवाहियों में भाग लिया। पश्चिम बंगाल में 130 केंद्रों में विरोध प्रदर्शनों का आयोजन किया गया जिसमें करीब 5500 महिलाओं ने भाग लिया।

त्रिपुरा के 8 जिलों के 53 स्थानों पर सैकड़ों महिलाओं ने विरोध प्रदर्शनों में भाग लिया। यहां बेलोनिया में हुआ पुलिस का लाठीचार्ज भी महिलाओं के विरोध प्रदर्शनों को रोक नहीं पाया। तमिलनाडु में 24 जिलों के 324 केंद्रों में 3,026 महिलाओं ने विरोध प्रदर्शनों का आयोजन किया। यह सब एडवा की लामबंदियों के आंकडे हैं।

इसी तरह तेलंगानाए आंध्र प्रदेश, महाराष्ट्र, कर्नाटक, झारखंड, दिल्ली, असम, बिहार, उत्तर प्रदेश, हरियाणा, ओडिशा, पंजाब, गुजरात, हिमाचल प्रदेश, राजस्थान, मध्य प्रदेश, उत्तराखंड, छत्तीसगढ़ तथा मणिपुर में भी सैकडों स्थानों पर हुये विरोध प्रदर्शनों में हजारों महिलाओं ने भाग लिया।

नयी दिल्ली में श्रम शक्ति भवन के बाहर आयोजित एक संयुक्त विरोध प्रदर्शन में उपरोक्त सभी महिला संगठनों के केंद्रीय नेता भी शामिल हुये। मांग पत्र के साथ एक संयुक्त ज्ञापन प्रधानमंत्री को भेजा गया। देश के विभिन्न

हिस्सों में कलेक्टरों, तहसीलदारों, बीडीओज तथा अन्य संबन्धित अधिकारियों को ज्ञापन दिये गये। इन हस्तक्षेपों के चलते अनेक स्थानीय मुद्दे हल हो सके।

एडवा तथा ए आई पी एस एन का पोंगापंथ विरोधी अभियान

गत 23 जुलाई के केप्टन लक्ष्मी सहगल स्मृति दिवस से लेकर 20 अगस्त डा. नरेंद्र दाभोलकर के शहादत दिवस तक का एक माह लंबा देशव्यापी अभियान सार्वजनिक स्वास्थ्य प्रणाली को मजबूत बनाने और आर एसएस भाजपा गठजोड़ द्वारा कोरोना वायरस को लेकर फैलाये जा रहे अंधविश्वासों तथा पोंगापंथ पर अंकुश लगाने की मांग करते हुये उत्साहपूर्ण तरीके से चलाया गया।

इस अभियान के दौरान एडवा कार्यकर्ताओं ने वैज्ञानिक तथा तार्किक सोच को प्रोत्साहित करने के लिये स्थानीय स्तर पर अनेकानेक सेमिनारों/मीटिंगों और परिचर्चाओं का आयोजन किया गया।

यह किसी तरह कोई आसान काम नहीं थाए खास तौर पर ऐसे वक्त में जब मनुवादी शक्तियाँ महिलाओं को भ्रमित करने के लिये धर्म और सांप्रदायिक प्रचार का इस्तेमाल कर रही हों। फिर भी एडवा तथा ए आई पी एस एन कार्यकर्ताओं ने इस अभियान को एक चुनौती की तरह लिया और इसने शासक निजाम के झूठ को बेनकाब करने में मदद की।

एडवा की राज्य तथा जिला कमेटियों ने प्रधानमंत्रीएमुख्यमंत्रियोंए स्वास्थ्य मत्रियोंएकलेक्टरों तथा स्थानीय अधिकारियों को ज्ञापन भेजे। कुछ राज्यों में आंगनबाडी और आशा कार्यकताऱओं ने भी इस अभियान में हिस्सेदारी की।

तेलंगाना में बेहतर स्वास्थ्य सुविधाओं की मांग करते हुये 200 से अधिक सरकारी अस्पतालों और प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्रों के सामने कोई 3000 से अधिक महिलाओं ने प्रदर्शन किये। बिहार और मध्य प्रदेश में भी सरकारी अस्पतालों के बाहर विरोध प्रदर्शनों का आयोजन यिका गया। कर्नाटक में एक मुफ्त स्वास्थ्य जांच शिविर का आयोजन किया गया।

हमें अधिक से अधिक महिलाओं के बीच पहुचंने के अपने प्रयास जारी रखने चाहिये । मोदी सरकार ने आज जब मजदूरों, असंगठित क्षेत्रों, किसानों, खेत मजदूरों, युवाओं, छात्रों आदि जनता के तमाम हिस्सों के तमाम संघशों के बाद हासिल अधिकारों को छीनने के लिये हर तरफ से हमले करने जारी कर दिये हैं ऐसे में हर हिस्से की महिलायें इससे सबसे अधिक बुरी तरह से प्रभावित होंगी क्योंकि महिलाओं के अधिकारों की रक्षा करने वाले कानूनों को भी कमजोर किया जा रहा है। इसलिये आइये हम अधिक से अधिक महिलाओं को जोडते हुये इस मनुवादी निज़ाम के खिलाफ अपने संघर्षों की तेजी को मजबूत करने का संकल्प लें।

अनुवाद – संध्या शैली

स्वामी अग्निवेश जी – श्रद्धांजलि

जगमती सांगवान

गत 11 सितंबर को आर्य समाजी नेता स्वामी अग्निवेश का देहांत वंचित व दलित तबकों के लिए भारी धक्का है। अग्निवेश जी तमाम जीवन एक सन्यासी के रूप में धर्म ,जाति ,लिंग ,वर्ग आधारित भेदभाव के खिलाफ संघर्षरत रहे। वह आर्य समाज की उस प्रगतिशील धारा का नेतृत्व करते थे जो हमारे मनुवाद, वर्ण व्यवस्था आधारित समाज को लोकतांत्रिक व नागरिक समाज में परिवर्तित करना चाहती थी। उनके इन व्यापक सरोकारों की वजह से उनके संघर्षों के अंतःसूत्र इन क्षेत्रों में काम करने वाले अन्य संगठनों व उनके नेतृत्व से स्वाभाविक रूप से जुडते थे। जिस प्रकार का स्नेह व सानिध्य वह तमाम संघर्षशील आंदोलनकारियों को देते थे उससे सभी को यह लगता था कि स्वामीजी सबसे ज्यादा उनके आंदोलन के हामी हैं।

कलकत्ता के प्रैजिडैन्सी कॉलेज में प्रोफेसर व बाद में कुछ समय वकालत करने के बाद, 1939 में आंध्र मे जन्मे स्वामी जी 1968 से आर्य समाज के आंदोलन के साथ पूर्णकालिक रूप से जुड़ गए। शुरू में हरियाणा व आसपास के इलाकों को उन्होंने अपने कार्य क्षेत्र की तरह चुना। इमरजेंसी में जेल काटने के बाद उन्होंने आर्य समाज में आर्य-सभा नामक संगठन खड़ा किया। वो 1977 में इसी मंच से चुनाव लड़ कर हरियाणा में शिक्षा मंत्री बने। 1981 में गुड़गांव में मजदूर आंदोलन पर लाठीचार्ज के खिलाफ उन्होंने मंत्री पद से इस्तीफा दे दिया व

‘बंधुआ मुक्ति मोर्चा’ का गठन करके मजदूरों के उत्पीड़न के खिलाफ निरंतर संघर्ष किया। अनेक मंचों पर इस मुद्दे को उठाते हुए बंधुआ-मजदूरी व बाल-श्रम के खिलाफ कानून भी बनवाने में मुख्य भूमिका अदा की।

अन्य तबकों के आंदोलनों के मुसीबत में काम आने वाले दोस्त की भूमिका वे निभाते थे। मसलन 1987 में राजस्थान के देवराला गांव में जब 23 वर्षीय रूप कंवर को सती किया गया तो महिला आंदोलन और बीजेपी के नेतृत्व में प्रतिक्रियावादी ताकतों के बीच भीषण संघर्ष छिड़ गया।उस समय, अग्निवेश जी ने दिल्ली से लेकर देवराला तक मार्च किया व सती प्रथा के महिमामंडन के खिलाफ कानून बनवाने में अहम भूमिका अदा की।

2003 में उन्होंने कन्या भ्रूण हत्या के खिलाफ देशव्यापी पदयात्रा की। एडवा और अन्य संगठन उस यात्रा के सक्रिय भागीदार रहे। हरियाणा में अपनी पसंद से शादी करने के अधिकार पर लड़े गए संघर्ष व इज्जत के नाम पर हत्याओं के खिलाफ संघर्ष का उन्होंने हर कठिन मोड़ पर जमकर साथ दिया। 2004 में जब हमारे संगठन ने स्वयंभू पंचायतों की फतवेबाजी की मुखालाफत करने वाले किसान, मजदूर, ज्ञान विज्ञान, फतवों से पीड़ित परिवार व अनेक संगठनों का ‘नागरिक अधिकार सम्मान सम्मेलन’ बुलाया तो वे स्वयं उसमें शामिल हुए। उनके आने से इतनी भारी भीड़ उमडी कि जाट कॉलेज, रोहतक के जिस हाल में प्रोग्राम रखा था, उसमें पहुंचने वाले लोग समा नहीं रहे थे। तभी स्वामी जी ने उठकर नारा लगाया ‘निकलो बाहर मकानों से ,जंग लड़ो बेईमानों से’ और पूरी भीड़ से बाहर मैदान में आने का आह्वान किया। उसके बाद नागरिक अधिकारों व महिला समानता के हक में हमारा आंदोलन भी सेमिनारों, गोष्ठियों से आगे बड़े फलक पर फलता फूलता गया।

हरियाणा के गोहाना कस्बे में आर एस एस और प्रतिक्रियावादी ताकतों ने बाल्मीकियों की पूरी बस्ती आग के हवाले कर के आतंक फैलाया। उस समय लगातार 10 दिनों तक जनसंपर्क करते हुए हमने "आतंक तोड़ो ,सद्भावना जोड़ो" यात्रा एक साथ निकाली। बाल्मीकि परिवारों के पुनर्वास का प्रबंध भी करवाया।

राज्यसभा टी वी चैनल पर स्वामी जी ने जो "मंथन" सीरियल चलाया, उसकी एक कड़ी हमारे संगठन के समाज सुधार कार्यों पर केंद्रित थी। मनोज-बबली की इज्जत के नाम पर निर्मम हत्या के बाद हमारे संगठन ने पीड़ित परिवार का पूरा साथ दिया और तमाम प्रतिक्रियावादी ताकतों ने हमें निशाना बनाया। लड़की का जमींदार परिवार राजनीतिक रूप से बड़े लोगों के साथ अच्छा तालमेल रखने वाला था। हमें अलग-थलग करने की कोशिश हरियाणा भर में चली। इस कठिन मोड़ पर स्वामी जी और उनका संगठन हमारे साथ कंधे से कंधा मिलाकर खड़ा हुआ।

स्वामी अग्निवेश अपने गेरुआ लिबास में धर्म के क्षेत्र में काम करते हुए हमेशा उदार मानवीय व सहनशील मूल्यों का प्रचार करते थे। हिंदुत्व के नाम पर बीजेपी के राजनैतिक खेल का वह, धर्म के दायरे में रहते हुए, जो पर्दाफाश करते थे उसके कारण वे उनकी आंख की किरकिरी बन गए और उनसे जुड़े लोगों ने उनकी उम्र और उनकी प्रतिष्ठा का कतई ख्याल ने रखते हुए उन पर हिंसात्म्क हमला तक किया। अंत मे इस हमले मे उनको आई चोटें ही उनकी मौत का कारण बनीं।

इस दौर में, अग्निवेश जी को सच्ची श्रद्धांजलि यही होगी कि वह जिस समतामूलक नागरिक समाज को बनाने के लिए संघर्षरत रहे, हम उसे साकार बनाने की कड़े व बड़े आधार वाले संघर्षों का निर्माण करें। निश्चित रूप से

साम्प्रदायिक व तमाम रंगत की विभाजनकारी ताकतों को दैनिक जीवन में अलग -थलग करना उस संघर्ष का अभिन्न हिस्सा होगा।

पुरस्कार वापसी आंदोलन के पांच साल

आशुतोष भारद्वाज

इसी सितंबर के महीने मे, 5 साल पहले, प्रो कलबूरगी की भागवा मानसिकता के लोगों द्वारा नृशंस हत्या की गई थी। इस हत्याके खिलाफ, संगीत नाटक अकादमी ने एक शब्द भी बोलना आवश्यक नहीं समझा जबकि कालबुरगी जी केवल देश के एक बड़े, प्रगतिशील, वर्ण व्यवस्था विरोधी चिंतक और लेखक ही नहीं, संस्था से जुड़े हुए व्यक्ति थे। इससे क्रोधित हो, देश भर के आला दर्जे के लेखको ने अकादमी से पाये अपने एवार्ड वापस कर दिये। यह सरकार की स्पष्ट होती जा रही गैर प्रजातांत्रिक और प्रतिक्रियावादी नीतियों के खिलाफ पहला और बहुत ही प्रभावशाली कदम था। 5 वर्षों के बाद उसकी याद को ताज़ा करने वाला यह लेख ***आशुतोष*** *ने लिखा है और हमे उसे छापने की अनुमति भी दी है – संपादक।*

ठीक पांच बरस पहले, चार सितम्बर २०१५, उदय प्रकाश ने एमएम कलाबुर्गी की हत्या के विरोध में साहित्य अकादमी पुरस्कार लौटाया था। साहित्य अकादमी पुरस्कार से सम्मानित कन्नड़ लेखक कलाबुर्गी को अज्ञात गुंडों ने तीस अगस्त को गोली मार दी थी।

उदय प्रकाश हालाँकि अकादमी पुरस्कार लौटाने वाले पहले लेखक थे, लेकिन करीब महीना भर बाद वह देशव्यापी आन्दोलन शुरू हुआ था जब अनेक भाषाओँ के करीब चालीस लेखकों ने बीसेक दिन के अन्दर अपने पुरस्कार लौटा केंद्र की शक्तिशाली सत्ता को हिला और दहला दिया था। सत्ता के चाटुकार तुरंत इन लेखकों को बदनाम करने के लिए मैदान में आये थे। 'अभियान प्रायोजित है', 'बिहार चुनाव को ध्यान में रखकर किया गया है', 'चंद लेखक इसके सूत्रधार हैं', जैसे आरोप कई केन्द्रीय मंत्री और सत्ता-पोषित पत्रकार उछालने लगे थे, अभी तक उछालते आये हैं। साहित्य अकादमी के तत्कालीन अध्यक्ष विश्वनाथ तिवारी भी लेखक बिरादरी पर ऐसे ही लांछन लगा रहे थे।

मैं, बतौर पत्रकार, इस पूरे प्रकरण का साक्षी था। आज पांच साल बाद यह भी कह सकता हुँ कि इस पूरे मसले पर सबसे अधिक मैंने ही लिखा था। इंडियन एक्सप्रेस के पहले पन्ने कर कई दिनों तक यह खबर मेरी बाइलाइन से आयी थी। मैं उन दिनों अनेक लेखकों के संपर्क में था। मेरे अनुसार यह स्वतः स्फूर्त आन्दोलन था, लेखकीय अस्मिता का उद्घोष।

सत्ता के ब्रह्मभोज में दरियाँ और पत्तल बिछाने वाले तथ्य से अधिक वास्ता नहीं रखते। वे गर्दभ राग अलापते रहेंगे। अगर फुर्सत हो तो कभी वे इन तथ्यों से गुजर सकते हैं:

अक्तूबर ६

दोपहर में नयनतारा सहगल अपना अकादमी सम्मान लौटाने की सार्वजनिक घोषणा करती हैं। मैं खबर लिखने से पहले उन्हें फोन करता हुँ, वह कहती हैं:

"प्रतिरोध का अधिकार ख़त्म हो रहा है। वर्तमान सरकार इस देश की महान सांस्कृतिक विविधता को नष्ट कर रही है।"

शाम को एक्सप्रेस के दफ्तर में खबर लिखते वक्त मुझे सूझता है कि किसी अन्य लेखक से इस पर प्रतिक्रिया ली जाए। मैं अशोक वाजपेयी को फोन करता हुँ। उन्हें तब तक अनेक लोगों की तरह नहीं मालूम कि नयनतारा सम्मान लौटा चुकी हैं। मैं जब उन्हें यह बताता हुँ, वह तुरंत कहते हैं:

"उन्होंने (नयनतारा) बहुत ही नेक काम किया है। मैं भी अपना पुरस्कार लौटाता हुँ।"

मैं थोड़ा हतप्रभ हुँ। मैंने सिर्फ उनकी प्रतिक्रिया के लिए फोन किया था, लेकिन उन्होंने नयनतारा सहगल के बारे में सुनते ही एक झटके से अपना पुरस्कार लौटा दिया। एक भाषा का लेखक दूसरी भाषा के लेखक के साथ तुरंत खड़ा हो जाता है।

मुझे कुछ बरस पहले का वाक्या याद आता है जब कृष्ण बलदेव वैद को मिलने वाले दिल्ली अकादमी के शलाका सम्मान का कुछ कांग्रेसी नेताओं ने विरोध किया था कि उनका लेखन "अश्लील" है। कन्नड़ के यूआर अनंतमूर्ति तुरंत बोले थे:

"वैद कद्दावर लेखक हैं। अगर उनका लेखन अश्लील है, तो मेरा भी सारा लेखन अश्लील है।"

अगली सुबह बाकी अख़बारों में सिर्फ नयनतारा का जिक्र है। एकाध अखबार को छोड़ सभी अख़बारों में अन्दर के पन्ने पर छोटी सी जगह मिली है, लेकिन इंडियन एक्सप्रेस के पहले पन्ने पर दो वरिष्ठ लेखकों के अकादमी सम्मान लौटाने की खबर है। यहीं से सिलसिला शुरू होता है। सत्ता तिलमिला जाती है। मंत्रियों के बेबुनियाद बयान आने लगते हैं।

अक्तूबर ९

अंग्रेजी उपन्यासकार शशि देशपांडे साहित्य अकादमी की जनरल काउंसिल से इस्तीफा दे देती हैं। तब तक छह कन्नड़ और एक उर्दू लेखक राज्य की अकादमियों के सम्मान कलाबुर्गी की हत्या के विरोध में लौटा चुके हैं।

देशपांडे अकादमी के अध्यक्ष तिवारी को आक्रोश भरी चिट्ठी लिखती हैं कि अकादमी लेखक के सम्मान की रक्षा नहीं कर पायी है।

वह मुझसे बात करते हुए कहती हैं:

“मैं कालबुर्गी को जानती थी। मुझे लगा था कि उनकी हत्या पर अकादमी कोई वक्तव्य जारी करेगी। मैं कम से कम इतना तो कर ही सकती हुँ कि जो संस्था अपने सदस्यों के लिए नहीं आगे आती, मैं उससे अलग हो जाऊं।”

अक्तूबर १०

मैं इस विषय पर एक्सप्रेस में एक सम्पादकीय लेख लिखता हुँ, ‘*टर्म्स ऑफ़ प्रोटेस्ट*’, जो शायद इस मसले पर कहीं भी प्रकाशित होने वाला पहला सम्पादकीय है। इसी दिन दोपहर में मेरे पास कृष्णा सोबती का फोन आता हुँ। वह आक्रोशित हैं, अपना अकादमी सम्मान और साथ ही अकादमी की फेलोशिप भी लौटा रहीं हैं:

“अकादमी के अध्यक्ष को कोई कदम उठाना चाहिए या तुरंत इस्तीफा देना चाहिए।”

लेखक समुदाय अब तक केंद्र सरकार के विरोध में था, लेकिन कुछ दिनों से अकादमी का रवैया देख तिलमिला उठा है। इसी दिन मलयालम उपन्यासकार सारा जोसफ अपना अकादमी सम्मान लौटाती हैं और के सच्चिदानंदन अकादमी की सभी समितियों से इस्तीफा दे देते हैं।

अक्तूबर १२

आज कुल आठ लेखक अपना सम्मान लौटाते हैं। कश्मीरी लेखक गुलाम नबी ‘ख्याल’, गुजराती कवि अनिल जोशी, कन्नड़ के रहमथ तरीकेरे और पंजाब के पांच लेखक- सुरजीत पातर, चमन लाल, बलदेव सिंह ‘सड़कनामा’, जसविंदर और दर्शन बुत्तर।

पिछले छह दिन में कुल २३ लेखक सम्मान लौटा चुके हैं। इसके अलावा कुछ लेखकों ने अनुवाद के लिए मिलने वाले अकादमी सम्मान भी लौटाए हैं। माया कृष्णा राव सरीखे रंगकर्मी संगीत नाटक अकादमी अवार्ड भी लौटा चुके हैं।

देश भर के रचनाकारों में आक्रोश फ़ैल रहा है। इस बीच सलमान रश्दी इन लेखकों के समर्थन में आ गए हैं।

अक्तूबर १५

अमिताव घोष मुझे दिए साक्षात्कार में इस आन्दोलन का पुरजोर समर्थन करते हैं।

“अवार्ड लौटाकर इन लेखकों ने जन हित में काम किया है।”

यह साक्षात्कार एक्सप्रेस के पहले पन्ने पर है। पिछले दस दिनों से यह खबर एक्सप्रेस के पहले पन्ने पर बनी हुई है।

लेखकों की सूची बढ़ती जाती है। राजेश जोशी, मंगलेश डबराल, गणेश देवी, केकी दारूवाला, काशीनाथ सिंह इत्यादि अपना सम्मान लौटा देते हैं।

इस बीच संघ का मुख-पत्र ‘*पांचजन्य*’अपनी कवर स्टोरी में इन लेखकों को “देशद्रोही” करार देता है, आरोप लगाता है कि ये लेखक कांग्रेस के कार्यकाल में क्यों चुप थे। ‘*पांचजन्य*’ भूल जाता है कि २०१० में कृष्णा सोबती और बादल सरकार ने कांग्रेस के शासनकाल में पद्म भूषण को अस्वीकार कर दिया था यह कहकर कि वे सत्ता से करीबी नहीं चाहते।

*‘पांचजन्य’*और तमाम संघ-समर्पित पत्रकार अशोक वाजपेयी पर इस आन्दोलन के सूत्रधार होने का भी आरोप लगाते हैं, जबकि उन्होंने साफ़ कहा है कि अपना सम्मान लौटाने के “दो दिनों बाद ही मैं फ्रांस और कनाडा चला गया और लगभग 16 दिन विदेश में ही था। इस बीच भारत के लेखक समुदाय के बीच क्या हुआ, इसका मुझे पता नहीं था।” संघ हिंदी के इस लेखक से इतना डरा हुआ है कि वह मान लेना चाहता है कि यह लेखक असम, केरल और कोंकणी के लेखकों को विदेश में बैठ संचालित कर सकता है।

बाद के दिनों में एक झूठा और विद्वेषपूर्ण आरोप यह भी लगा कि इस आन्दोलन की निगाह बिहार चुनाव पर थी। सम्मान लौटाने वाले लेखकों में आसामिया, मलयालम, कश्मीर, गुजरात, हिंदी, पंजाबी, कोंकणी, अंग्रेजी, तेलुगु, कन्नड़ इत्यादि भाषाओं के लेखक शामिल थे। कश्मीर या केरल में बैठे लेखक के स्वर में बिहार चुनाव को खोज लेना संघ-पोषित पत्रकार की बड़ी मौलिक सोच है, जिसके लिए अकादमी एक अन्य पुरस्कार की घोषणा कर सकती है।

यह आन्दोलन भारतीय लेखक समुदाय की सामूहिक अभिव्यक्ति थी, जिसके नैतिक ओज ने अपार शक्तिशाली सत्ता को बौखला दिया। ऐसा कब हुआ है कि चंद लेखक तमाम विवादों में घिरी किसी संस्था का सम्मान लौटाते हैं, समूचा सरकारी तंत्र डोलने जाता है।

पांच बरस पहले इस विषय पर ख़बरें लिखते हुए लगता था कि एक ईमानदार शब्द तमाम असत्यों पर भारी पड़ता है, लेखकीय गरिमा किसी भी तानाशाह को चुनौती दे सकती है।

इन बरसों में यह आस्था अधिक दृढ़ हुई है ।

साहित्य और कला की दुनिया से – महादेवी वर्मा, गजाननमाधव, मक़बूल फिदा हुसैन, मुक्तिबोध, अवतार सिंह संधु 'पाश'

सितंबर के महीने मे साहित्य और कला की दुनिया से जुड़े बड़े लोगों के जीवन की महत्वपूर्ण तिथियाँ भरी हुई हैं। यह वो लोग हैं जिन्होने अपने लेखन और अपने ब्रश से श्रम के जीवन का केवल चित्रण ही नहीं किया है बल्कि उसको बदलने की प्रेरणा भी लोगों मे भरी है। इनमे वह भी हैं जिन्होने हिन्दी मे महिला विमर्श के दौर के किवाण को खोलने के काम किया है। यह इतने बड़े लोग हैं की इनके बारे मे ज़्यादा कुछ कहना अनावश्यक है लेकिन इनको याद रखना और इनकी कला से पैदा होने वाली क्रान्ति की अंगारों को लगातार जलाए रखना हम सब का करतव्य है। इनके बारे मे कम लिखते हुए, इनकी कुछ कृतियों को आपके सामने ला रहे हैं ताकि उनको पढ़ने और जानने की रुचि पैदा हो और जहां मौजूद है वहाँ और प्रबल बने

महादेवी वर्मा *(26 मार्च 1907 – 11 सितंबर 1987)*

महादेवी जी उन कवियों में से एक हैं जिन्होंने व्यापक समाज में काम करते हुए भारत के भीतर विद्यमान हाहाकार, रुदन को देखा, परखा और करुण होकर अन्धकार को दूर करने वाली दृष्टि देने की कोशिश की। महिलाओं के प्रति उनकी चेतना भावना भी इस दृष्टि से प्रभावित रहे। उन्होंने अध्यापन से अपने कार्यजीवन की शुरूआत की और अन्तिम समय तक वे प्रयाग महिला विद्यापीठ की प्रधानाचार्या बनी रहीं। उनका बाल-विवाह हुआ परन्तु उन्होंने अविवाहित की भांति जीवन-यापन किया।

उनकी एक अनोखी कविता जो कभी किसी पाठ्य क्रम मे शामिल नहीं की गयी लेकिन जो, शायद, उनकी आत्मा की सच्ची पुकार थी

मैं हैरान हुँ

मैं हैरान हुं यह सोचकर

किसी औरत ने क्यों नहीं उठाई उंगली?

तुलसी दास पर जिसने कहा

“ढोल, गंवार, शूद्र, पशु, नारी,

ये सब ताड़न के अधिकारी।

मैं हैरान हुं,

किसी औरत ने क्यों नहीं जलाई ‘मनुस्मृति’?

जिसने पहनाई उन्हें

गुलामी की बेड़ियां ?

मैं हैरान हु,

किसी औरत ने क्यों नहीं धिक्कारा उस 'राम' को

जिसने गर्भवती पत्नी सीता को,

परीक्षा के बाद भी,

निकाल दिया घर से बाहर

धक्के मार कर?

किसी औरत ने लानत नहीं भेजी

उन सब को जिन्होंने

'औरत को समझ कर वस्तु'

लगा दिया था दाव पर?

होता रहा 'नपुंसक' योद्धाओं के बीच

समूची औरत जाति का चीरहरण महाभारत में

मै हैरान हुं यह सोचकर

किसी औरत ने क्यों नहीं किया

संयोगिता, अंबा, अंबालिका के

दिन दहाड़े अपहरण का विरोध आज तक?

और मैं हैरान हुं,

इतना कुछ होने के बाद भी,

क्यों अपना 'श्रद्धेय' मानकर,

पूजती हैं मेरी मां–बहने

उन्हें देवता–भगवान मानकर?

मैं हैरान हुं उनकी चुप्पी देखकर

इसे उनकी सहनशीलता कहुं या

अंध श्रद्धा? या फिर मानसिक गुलामी की पराकाष्ठा?

गजानन माधव मुक्तिबोध *(13 नवंबर, 1917-11 सितंबर, 1964)*

गजानन माधव मुक्तिबोध हमारे समय के प्रखरतम कवियों और साहित्यिकों में अग्रिम पंक्ति के रचनाकार हैं। उनकी वैचारिकी मार्क्सवादी विचारों और जीवन तथा समाजार्थिक संघर्षों में तप कर उन्ही की कविता की पंक्ति में कहें तो "संकल्पधर्मा चेतना का रक्तप्लावित स्वर" बनी है! वे राजनीतिक रूप से इतने सतर्क थे कि संबंध बनाने से पहले पता करते थे"पार्टनर,तुम्हारी पालिटिक्स क्या है?"

उनके जीते जी कोई कविता संग्रह प्रकाशित न हुआ लेकिन महज 47 वर्ष की उम्र में चले गए मुक्तिबोध हिंदी कविता और लेखन के आइकॉन बने।

उनकी एक गजब की कविता

मैं तुम लोगों से दूर हुँ

मैं तुम लोगों से इतना दूर हुँ

तुम्हारी प्रेरणाओं से मेरी प्रेरणा इतनी भिन्न है

कि जो तुम्हारे लिए विष है, मेरे लिए अन्न है।

मेरी असंग स्थिति में चलता-फिरता साथ है,

अकेले में साहचर्य का हाथ है,

उनका जो तुम्हारे द्वारा गर्हित हैं

किंतु वे मेरी व्याकुल आत्मा में बिंबित हैं, पुरस्कृत हैं

इसीलिए, तुम्हारा मुझ पर सतत आघात है !!

सबके सामने और अकेले में।

(मेरे रक्त-भरे महाकाव्यों के पन्ने उड़ते हैं

तुम्हारे-हमारे इस सारे झमेले में)

असफलता का धूल-कचरा ओढ़े हुँ

इसलिए कि वह चक्करदार जीनों पर मिलती है

छल-छद्म धन की

किंतु मैं सीधी-सादी पटरी-पटरी दौड़ा हुँ

जीवन की।

फिर भी मैं अपनी सार्थकता से खिन्न हुँ

विष से अप्रसन्न हुँ

इसलिए कि जो है उससे बेहतर चाहिए

पूरी दुनिया साफ करन के लिए मेहतर चाहिए

वह मेहतर मैं हो नहीं पाता

पर, रोज कोई भीतर चिल्लाता है

कि कोई काम बुरा नहीं

बशर्ते कि आदमी खरा हो

फिर भी मैं उस ओर अपने को ढो नहीं पाता।

रिफ्रिजरेटरों, विटामिनों, रेडियोग्रेमों के बाहर की

गतियों की दुनिया में

मेरी वह भूखी बच्ची मुनिया है शून्यों में

पेटों की आँतों में न्यूनों की पीड़ा है

छाती के कोषों में रहितों की व्रीड़ा है

शून्यों से घिरी हुई पीड़ा ही सत्य है

शेष सब अवास्तव अयथार्थ मिथ्या है भ्रम है

सत्य केवल एक जो कि

दुखों का क्रम है

मैं कनफटा हुँ हेठा हुँ

शेव्रलेट-डॉज के नीचे मैं लेटा हुँ

तेलिया लिबास में पुरजे सुधारता हुँ

तुम्हारी आज्ञाएँ ढोता हुँ।

मकबूल फिदा हुसैन *(17 सितंबर, 1915 – 9 जून, 2011)*

हुसैन का जन्म महाराष्ट्र के पंधरपुर गाँव मे हुआ था जहां देश भर के तीर्थ यात्री आते थे और जहां भक्ति शैली के भजन-कीर्तन साल भर गूँजते थे। बचपन से ही देवी देवताओं और रामायण-महाभारत की कहानियों उनके चिंतन

का हिस्सा बन गयी थी। इसके साथ ही, चित्र बनाने का जैसे उन्हे जुनून था। हर चीज़ का चित्र बनाते और हर तरह के साधन इसके लिए इस्तेमाल करते – मिट्टी, पत्थर, फूल, आटे की लोई!

जीविका कमाने, हुसैन बंबई पहुंचे। वहाँ वह ऊंची सीढ़ियों पर चढ़े, दिन भर सिनेमा के पोस्टर बनाते थे और शाम को अपने मन के चित्र। संयोग से उस समय कला जगत मे आधुनिक कला की शुरुआत करने वाले बंबई प्रोग्रेसिव आर्टिस्ट अभियान के संस्थाप्क, सूजा, ने उनके चित्रों को देखा और उन्हे अपने संगठन का हिस्सा बना लिया।

हुसैन की शैली आधूनिक लेकिन भारत की मिट्टी के असर मे ओत-प्रोत थी उस मिट्टी के साथ उनका जुड़ाव और भी बढ़ा जब उन्होने मुक्तिबोध के पार्थिव शरीर को श्रद्धांजलि देने के तुरंत बाद, पैर मे चप्पल पहनना हमेशा के लिए त्याग दिया। उनके मुक्तिबोध की शोक सभा मे जन इस बात का पता चला की उस महान कवि की एक भी पुस्तक नहीं छपी थी तो क्रोधित और उद्धेलित होकर उन्होने अपनी चप्पल फेंक दी और कसम खा ली कि अब नंगे पैर ही चलेंगे।

लेकिन हुसैन को अपनी मिट्टी से परिस्थितियों ने अलग कर दिया। वे देवियों के चित्र बनाते थे। उन्होने भारत के नक्शे को भी एक महिला के रूप मे चित्रित किया। निर्वस्त्र देवियों के चित्र भी बनाए। सालों तक इस पर कोई टिप्पणी नहीं हुई। आखिर मंदिरों मे इस तरह के न जाने कितने मूर्तियाँ और चित्र मौजूद थे। लेकिन हिंदुत्ववादी शक्तियों के उभार के बाद, हुसैन उनके निशाने पर आ ही गए। उनके खिलाफ मुहिम छेद दी गयी, उनकी तस्वीरों को चाकुओं से काट दिया गया, उनकी प्रदर्शनियों को जुलूस निकालकर होने नहीं दिया गया। और आखिर, हुसैन भारत छोड़ने के लिए मजबूर हो गए।

उनका देहांत भी विदेश मे – लंदन मे – हुआ। लेकिन उनकी कला और उनके व्यक्तित्व और उनकी प्रतिभा की ज़बरदस्त छाप प्रतिक्रियावादी ताकतों की लाख कोशिशों के बाद भी देश की सांस्कृतिक विरासत पर जो पड़ी तो फिर मिटी नहीं। आज भी, जब भारत और आधुनिक कला की बात होती है तो हुसैन का नाम ही सबसे पहले जेहन मे आता है।

अवतार सिंह संधु 'पाश' *(9 सितंबर,1950 – 23 मार्च, 1988)*

अवतार सिंह संधु जिनको देश भर के लोग 'पाश' के नामे से ही जानते याद करते हैं का जन्म पंजाब के एक गाँव मे हुआ था। उनकी हत्या, खालिस्तानी आतंकवादियों के हाथ, 23 मार्च, भगत सिंह के शहादत के दिन ही, हुई थी।

पाश के लिखे में गांव की मिटटी की महक है. उनकी कविताओं में बैल, रोटियां, हुक्का, गुड़, चांदनी रात, बाल्टी में झागवाला दूध, खेत खलिहान सब अपने पूरे वजूद में जीते-जागते मिलते हैं. उन्होने अपने बारे मे कहा 'मैं आदमी हुं / बहुत-बहुत छोटा-छोटा कुछ/ जोड़कर बना हुं.'

पाश क्रान्ति के कवि थे, वह जीना भी चाहते थे, कहते थे 'मुझे जीने की बहुत-बहुत चाह थी / कि मैं गले-गले तक जिंदगी में डूब जाना चाहता था / मेरे हिस्से की जिंदगी भी जी लेना मेरे दोस्त'। जीने की चाहत के साथ, मौत की आशंका भी उनको घेरे रहती थी। वह अपने बारे मे कहते थे की वह बीच की राह पर चलने वाले नहीं। वह जानते थी की इसकी सज़ा उन्हे कभी भी मिल सकती है।

उनकी मशहुर कविता

सबसे खतरनाक है

मेहनत की लूट सबसे ख़तरनाक नहीं होती
पुलिस की मार सबसे ख़तरनाक नहीं होती
ग़द्दारी और लोभ की मुट्ठी सबसे ख़तरनाक नहीं होती

बैठे-बिठाए पकड़े जाना - बुरा तो है
सहमी-सी चुप में जकड़े जाना - बुरा तो है
पर सबसे ख़तरनाक नहीं होता

कपट के शोर में
सही होते हुए भी दब जाना - बुरा तो है
जुगनुओं की लौ में पढ़ना -बुरा तो है
मुट्ठियां भींचकर बस वक़्त निकाल लेना - बुरा तो है
सबसे ख़तरनाक नहीं होता

सबसे ख़तरनाक होता है
मुर्दा शांति से भर जाना

तड़प का न होना सब सहन कर जाना
घर से निकलना काम पर
और काम से लौटकर घर जाना
सबसे ख़तरनाक होता है
हमारे सपनों का मर जाना

सबसे ख़तरनाक वो घड़ी होती है
आपकी कलाई पर चलती हुई भी जो
आपकी नज़र में रुकी होती है

सबसे ख़तरनाक वो आंख होती है
जो सबकुछ देखती हुई जमी बर्फ होती है
जिसकी नज़र दुनिया को मोहब्बत से चूमना भूल जाती है
जो चीजों से उठती अंधेपन की भाप पर ढुलक जाती है
जो रोज़मर्रा के क्रम को पीती हुई
एक लक्ष्यहीन दुहराव के उलटफेर में खो जाती है

सबसे ख़तरनाक वो चांद होता है
जो हर हत्याकांड के बाद
वीरान हुए आंगन में चढ़ता है
लेकिन आपकी आंखों में मिर्चों की तरह नहीं गड़ता

सबसे ख़तरनाक वो गीत होता है
आपके कानो तक पहुँचने के लिए
जो मरसिए पढता है
आतंकित लोगों के दरवाज़ों पर
जो गुंडों की तरह अकड़ता है

सबसे खतरनाक वह रात होती है
जो ज़िंदा रूह के आसमानों पर ढलती है
जिसमे सिर्फ उल्लू बोलते और हुआँ हुआँ करते गीदड़
हमेशा के अँधेरे बंद दरवाजों-चौगाठों पर चिपक जाते है

सबसे ख़तरनाक वो दिशा होती है

जिसमें आत्मा का सूरज डूब जाए
और जिसकी मुर्दा धूप का कोई टुकड़ा
आपके जिस्म के पूरब में चुभ जाए

मेहनत की लूट सबसे ख़तरनाक नहीं होती
पुलिस की मार सबसे ख़तरनाक नहीं होती
ग़द्दारी और लोभ की मुट्ठी सबसे ख़तरनाक नहीं होती।

लॉकडाउन में डिजिटल स्कूली शिक्षा की विफलता : एक अध्ययन

ऑक्सफेम द्वारा किये गए एक अध्ययन में पांच राज्यों के 80 प्रतिशत से अधिक अभिभावकों ने बताया है कि लॉक डाउन के दौरान डिजिटल माध्यमों के जरिये जिस स्कूली शिक्षा व्यवस्था का बड़ा भारी प्रचार किया गया है, वह विफल रही है। इस विफलता की मुख्य वजह है कि इन परिवारों के पास न तो डिजिटल उपकरण उपलब्ध थे और न ही शिक्षा के लिए उपयुक्त माध्यम। इस अध्ययन की रिपोर्ट 4 सितम्बर, 2020 को जारी की गयी थी। जिस सर्वे पर यह अध्ययन आधारित है, उसमें बिहार, छत्तीसगढ़, झारखण्ड, ओड़िशा तथा उत्तर प्रदेश के 1,158 परिवारों एवं 488 अध्यापकों ने भाग लिया था, तथा यह सर्वे मई और जून महीनों के दरम्यान किया गया था।

सरकारी आंकड़ों के अनुसार, भारत के ग्रामीण परिवारों के केवल 15 प्रतिशत के पास इन्टरनेट की सुविधा उपलब्ध है, तथा दलित, आदिवासी एवं मुस्लिम जैसे हाशिये पर पड़े तबकों के बीच यह प्रतिशत और भी कम है। इसके भी ऊपर लैंगिक भेदभाव के चलते डिजिटल उपकरणों एवं माध्यमों तक बालिकाओं की पहुँच तो बहुत ही कम हो जाती है। इसके अतिरिक्त, ऑक्सफेम इंडिया द्वारा किये गए सर्वे में 80 प्रतिशत अभिभावकों ने यह भी बताया है कि चूंकि उनके बच्चों के पास नए सत्र की पाठ्य पुस्तकें उपलब्ध नहीं थीं, इसलिए डिजिटल शिक्षा व्यवस्था की समस्या और अधिक जटिल हो गयी थी। अध्ययन में शामिल हुए 71 प्रतिशत शिक्षकों ने भी इस बात की तस्दीक की कि सत्र के शुरू होने से पहले ही छात्रों के पास पाठ्य पुस्तकें उपलब्ध होनी ही चाहिए थीं।

महामारी के चलते भारत में स्कूलों को मार्च के महीने में बंद कर दिया गया था। तत्पश्चात, जून में ऑनलाइन कक्षाएं प्रारम्भ की गयीं थीं। अध्ययन में बताया गया है कि सरकारी स्कूलों में महामारी ने न केवल शिक्षण व्यवस्था को प्रभावित किया, बल्कि शैक्षणिक सामग्री तथा मिड डे भोजन वितरण को भी प्रभावित किया है। अध्ययन में बताया गया है कि सुप्रीमकोर्ट के निर्देशों के बावजूद 35 प्रतिशत छात्रों को उनका मिड डे भोजन उपलब्ध नहीं हो पाया था।

प्राइवेट स्कूलों में भी शिक्षण व्यवस्था बाधित रही, हालांकि सरकारी स्कूलों की तुलना में ऐसा कम स्तर पर था। इस अध्ययन के अनुसार, प्राइवेट स्कूलों के छात्रों के 59 प्रतिशत अभिभावकों ने बताया कि उनके बच्चों का शिक्षण नहीं हो पाया था।

ऑक्सफेम सर्वे में बताया गया है कि स्कूलों के पुनः खुल जाने के उपरान्त लगभग एक तिहाई छात्र ऐसे हो सकते हैं जो वापस स्कूल नहीं आ सकेंगे। इससे गरीब तबकों में बाल श्रम का खतरा बढ़ जाएगा।

विशेषज्ञों ने तो डिजिटल शिक्षा व्यवस्था की प्रभावशीलता के बारे में अपने संदेह वैसे ही प्रकट किये हैं। इसके अतिरिक्त इन्टरनेट की स्पीड तथा सिग्नल उपलब्ध न होने पाने की समस्या भी उभर कर सामने आयी है। छात्र एवं अभिभावक ही नहीं बल्कि अध्यापकों ने भी इस सम्बन्ध में अपने सामने पेश हुयी दिक्कतों का जिक्र किया है। शिक्षकों ने एक अन्य महत्वपूर्ण मुद्दे की ओर भी ध्यान आकृष्ट किया है – कि 20 प्रतिशत से भी कम अध्यापकों को डिजिटल उपकरणों की मदद से शिक्षण प्रदान करने की तकनीकों के बारे में बताया गया है। बिहार एवं झारखंड में तो 5 प्रतिशत से भी कम शिक्षकों को इस सम्बन्ध में कोई प्रशिक्षण दिया गया है।

सर्वे में शामिल आधे से अधिक अध्यापकों ने यह राय प्रकट की कि ऑनलाइन कक्षाओं की तुलना में पाठ्य पुस्तकों पर आधारित शिक्षण व्यवस्था अधिक प्रभावी होती है। इसके बावजूद कि पाठ्य पुस्तकों पर आधारित शिक्षण व्यवस्था दूरस्थ शिक्षा के लिए भी सर्वोत्तम माध्यम होती है, 80 प्रतिशत से अधिक छात्रों को नए सत्र की पाठ्य पुस्तकें उपलब्ध नहीं हो पायीं। बहरहाल, सर्वे में मोहल्ला स्कूलों का तथ्य सामने आया है, जिनके लिए स्वयंसेवी संस्थाएं ने पहल की है। छत्तीसगढ़ तथा मध्य प्रदेश में यह प्रयोग किया गया है। बच्चों के छोटे छोटे समूहों को खुले स्थानों पर इकठ्ठा किया जाता है, जहां शारीरिक दूरी बनाये रखी जा सकती है। इस प्रकार हफ्ते में कम से कम दो दिन कक्षाएं चलाई जा सकती हैं। हरियाणा में भी यह प्रयोग किया गया है। इस प्रक्रिया में स्मार्टफोन, इन्टरनेट आदि की कोई आवश्यकता नहीं पड़ती है, तथा बच्चे शिक्षण व्यवस्था से जुड़े रहते है।

कमजोर तबके अधिकतम प्रभावित हुए हैं : एक ताजा अध्ययन के मुताबिक़ भारत में महामारी के कारण लगभग साढ़े ग्यारह करोड़ बच्चे कुपोषण के शिकार हो सकते हैं। उनमें आदिवासी एवं दलित समुदायों के बच्चे अधिक संख्या में होंगे क्योंकि वे मिड डे भोजन पर अधिक निर्भर होते हैं। यूनिसेफ की एक रिपोर्ट के अनुसार कमजोर तबकों के बच्चों में से भी किशोर बच्चियां कुपोषण की शिकार अधिक संख्या में हो सकती हैं।

डिजिटल खाई के कारण हाशिये के समूहों को अतिरिक्त समस्याओं का सामना करना पड़ता है। ऑक्सफेम सर्वे के मुताबिक़, 15 प्रतिशत से कम दलित, आदिवासी तथा मुस्लिम तबकों की इन्टरनेट तक पहुँच है। उधर इन्टरनेट का प्रयोग करने वाले कुल भारतीयों में महिलाओं की हिस्सेदारी केवल 29 प्रतिशत है।

अध्ययन में संकट ग्रस्त बच्चों की सुरक्षा के लिए तमाम सामाजिक कल्याण की योजनाओं जैसे कि उत्तर प्रदेश की बाल श्रमिक विद्या योजना, केंद्र सरकार की मिड डे भोजन – समन्वित बाल विकास – छात्रवृत्ति योजना आदि को कार्यान्वित किये जाने की सिफारिश की गयी है।

फीस वृद्धि : प्राइवेट स्कूलों के बच्चों के 39 प्रतिशत अभिभावकों ने यह शिकायत की है कि सरकार की इस दलील के बावजूद कि लॉक डाउन के दौरान फीस में कमी लाई जाय, अगले सत्र की फीस में वृद्धि की गयी है।

स्कूलों का खोला जाना : 21 सितम्बर से स्वैच्छिक आधार पर ग्यारहवीं और बारहवीं कक्षा के छात्रों के लिए स्कूलों का चरण बद्ध तरीके से खोला जाना तय किया गया है। सरकार ने अभी हाल में इस सम्बन्ध में दिशा निर्देश जारी किये हैं। ऑक्सफेम ने भी अपने अध्ययन के आधार पर शिक्षण प्रक्रिया को पुनः चालू करने तथा छात्रों को सुरक्षित स्कूलों में लौटने के उपायों को सूचीबद्ध किया है। इसमें मिड डे भोजन व्यवस्था चालू करना, स्कूलों में पानी, साबुन, तथा टॉयलेट की सुविधाओं को सुनिश्चित करना, पाठ्य पुस्तकों की उपलब्धता सुनिश्चित करना, तथा सभी अध्यापकों की मुफ्त जांच किये जाने की सुविधाओं को सुनिश्चित करना शामिल है।

(लेखिका आस्था मालिक, इंडिया स्पेंड के सौजन्य से; अनुवाद – अशोक गर्ग)

जनता की बदहाली और तबाही से बेखबर सरकार

सुभाषिनी अली

9 महीने के बाद संसद का सत्र एक हफ्ते के लिए आहुत किया गया। लोगों मे बड़ी उत्सुकता थी कि इतने दिनों के बाद, इतनी ज़बरदस्त यातनाओं को सहने के बाद, महामारी कि मार को बिना कवच-कुंडल के सामना करने के बाद, सरकार उनके सामने आएगी, उनके द्वारा चुने गए प्रतिनिधियों के सवालों के जवाब देगी और उनकी मुसीबतों को कुछ हद तक दूर करने की तसल्ली देगी।

लोगों के मन मे बड़े बड़े सवाल थे और उन सवालों को पूछने का काम विपक्ष के सदस्यों ने पूरी मुस्तैदी से किया।

पहला सवाल था: लाक डाउन के दौरान और उसके खुलने के तुरंत बाद, कितने प्रवासी मजदूरों की मौत हुई? मरने वालों के आश्रितों को मुआवजा मिलेगा?

सरकार के श्रम और रोजगार मंत्रालय ने उत्तर दिया – हमे नहीं मालूम। नही मालूम? रेल की पटरियों पर कटते लोगों को नहीं देखा? दुर्घटनाओं मे लोगों को सड़क पर पड़े मरते हुए नहीं देखा? भूख से बिलबिलाते बच्चों को दम तोड़ते नहीं देखा? देश भर ने देखा। मरने वालों का हिसाब भी कुछ संस्थानो ने लगाया। लेकिन सरकार ने कुछ नहीं देखा तो मुआवजा किसको दे?

फिर, पूछा गया कि यह तो बता दें कि आपके द्वारा चलाई गई ट्रेनों मे कितने लोग मरे? रेलवे का तो नियम है कि ट्रेन पर मरने वालों को मुआवजा दिया जाता है। पहले तो सरकार ने कह दिया – नहीं पता। फिर जब हल्ला मचा तो रेल मंत्री ने बताया – 96 मरे। लेकिन मुआवजा नहीं मिलेगा क्योंकि रेलवे की गलती से नहीं मरे। यात्रियों को भूखा और प्यासा सफर करने के लिए मजबूर किया रेलवे ने; उन्हे दिल्ली से गोरखपुर पहुंचाया भूवनेश्वर के रास्ते से; प्लेटफॉर्म पर उन्हे घंटो खड़ा रहने के लिए मजबूर किया और फिरभी रेलवे उनकी मौत की ज़िम्मेदारी से बरी! ज़िम्मेदारी नहीं, तो मुआवजा भी नहीं।

महिला एवं बाल विकास मंत्री, स्मृति ईरानी, से पूछा गया कि लाक डाउन के दौरान आंगनवाडियों मे काम करने वाली कितनी महिलाओं का काम छूटा? उनका उत्तर – पता नहीं। फिर पूछा गया – इस कोरोना काल मे कितनी लड़कियों का स्कूल छूट गया। इसके बारे मे भी उनको पता नहीं।

जब श्रम एवं रोजगार मंत्री से पूछा गया कि देश मे बेरोजगारी के ताज़-तरीन आंकड़े क्या हैं तो उन्होने अपने उत्तर मे बताया कि सरकार रोजगार उपलब्ध कराने के लिए उपाय कर रही है।

लाक डाउन लागू करने से एक दिन पहले, मोदी जी ने देश भर के लोगों से डाक्टरों, नर्सों और अन्य 'कोविद योद्धाओं' के लिए थाली बजाकर उनके हौसलों को बुलंद करने की अपील की थी। दुर्भाग्य से, जब लोक सभा मे पूछा गया कि कोरोना काल मे कितने स्वास्थ्यकर्मियों की मौत हुई है, तो स्वास्थ्य मंत्री ने जवाब दिया कि उन्हे पता नहीं। सरकार की इस संवेदनहीनता के खिलाफ इंडियन मेडिकल एसोशिएशन ने बहुत ही तीखी प्रतिक्रिया व्यक्त की। सरकार को लिखे एक पत्र के माध्यम से IMA के महामंत्री ने बताया कि 382 डाक्टर मर चुके हैं जिनमे से करीब आधे निजी क्षेत्र मे कार्यरत थे। इनको किसी प्रकार का मुआवजा नहीं मिला है। उन्होने बताया कि डाक्टरों और स्वास्थ्य कर्मियों की तमाम दिक्कतों को लेकर वे 8 अगस्त को भी मोदी जी को पत्र भी भेज चुके हैं, लेकिन उन्हें उत्तर नहीं मिला।

सरकार से यह भी पूछा गया की करोना काल मे कितने किसानो ने आत्म हत्या की है तो उसका भी वही उत्तर आया – पता नहीं।

और यह आखरी सवाल-जवाब उसी दिन हुआ जिस दिन सरकार ने किसानों की बदहाली और लाचारी बढ़ाने के लिए उसकी फसल को उचित मूल्य से वंचित रखने के लिए उसने सांसदों के अधिकारों पर अपने बहुमत और प्रजातन्त्र विरोध के बुलडोजर को चढ़ाकर कानून पारित कर डाले।

सरकार को जनता के अधिकारो को कैसे रौंदा जाये – यही पता है; और कुछ नहीं पता।

मैंने उनसे महंगाई, बेरोजगारी, किसानों की बात की तो वे मुझे न्यूज़ चैनल्स की बंदरछाप न्यूज़ बताने लगे..

मिथुन प्रजापति

आज उनके घर फिर से जाना हुआ। घूमने के उद्देश्य से नहीं बल्कि सब्जी छोड़ने के लिए। ऐसे तो वे लॉकडाउन में सब्जियां उठा ले जाते थे दुकान से। पर जबसे सब खुलने लगा है और कोरोना का डर कम हुआ है लोग अपने पुराने आलस पर फिर आ गए और फोन करके सब्जी मंगा लेते हैं।

मैंने दरवाजे पर पहुंचकर बेल बजाई। कुछ देर दरवाजे के खुल जाने की प्रतीक्षा में खड़ा रहा। दरवाजा न खुला। मैं अगल बगल चीजों का मुआयना करने लगा। दरवाजा साफ सुथरा था। एक फूल की माला जिसे आम भाषा मे तोरण कहा जाता है दरवाजे पर लटक रहा था। उसकी विशेषता यह थी कि वह सूख के अपने मूल स्वरूप को खो चुकी थी। शायद किसी पूर्व त्योहार पर उसे दरवाजे पर टांग दिया गया था और लगाने वाले ने अपने शुभ अशुभ या आलस की वजह से उसे अबतक नहीं उतारा था। उस तोरण कहे जाने वाले सूखे फूलों के नीचे एक हनुमान, एक गणेश और एक साईं की फोटो चिपका दी गई थी जो शायद चिपकाए जाने के बाद से अबतक साफ न की गई थी। उसे देखकर लगता था भगवान लोग नाराज होते होंगे। कुछ क्षण बीत गए तो मैंने बेल फिर से बजा दी। इस बार बेल के बजा देने से एक सचिन पायलट से दिखने वाले व्यक्ति ने दरवाजे को खोल दिया। उसे देखते ही मेरे दिमाग में पिछले महीने राजस्थान में हुए घटनाक्रम याद आ गए। मुझे याद आ गया कि जब दुनिया, देश, देश के लोग कोरोना नाम की महामारी से लड़ रहे थे तो कुछ लोग सरकार गिराने, बनाने की जुगत में लग देश को महत्वपूर्ण मुद्दों से भटकाए रखे थे। खैर...

उस व्यक्ति ने पूछा- आप मिथुन हैं न?
मैंने हां में सिर हिला दिया।

उसने फिर कहा- सब्जियां लाये हैं न? एक काम करो, अंदर आ जाओ। फादर वाशरूम में हैं। वे आ जाएंगे तो पैसे देंगे। इतना कहकर उसने दरवाजा पूरा खोल दिया। मैं अंदर प्रवेश कर गया सब्जियों के साथ। उसने सब्जियां हाथ से ले ली और सोफे की तरफ इशारा करके बैठने को कहा।

...मैं सोफे पर बैठा फादर के आने की प्रतीक्षा करने लगा। सामने टी. वी. चल रही थी। टी. वी. पर कोई न्यूज़ चैनल था जो जून से चले आ रहे मुद्दे को ब्रेकिंग न्यूज़ बताकर बार बार फ़्लैश कर रहा था। मुझे उसमें दिलचस्पी नहीं थी। मैं न्यूज़ नहीं देखता। महत्वपूर्ण खबरें बहुत सी विश्वसनीय वेबसाइटों से मिल जाती हैं। कभी कभी एनडीटीवी देख लेता था। पर केबल ऑपरेटर ने आजकल वह भी काट दिया है। यह महज मेरी शिकायत नहीं है। मेरे जानने वाले भी यही बताते हैं। यह सिर्फ मुम्बई में नहीं हो रहा। पूरे देश मे हो रहा है। खबर दिखाने वाले, रोजगार, महंगाई, भुखमरी की खबर दिखाने वाले चैनलों के प्रसारण रोकने के प्रयास लगातार जारी हैं। सही रिपोर्टिंग करने वालों को प्रताड़ित करना लगातार जारी है।

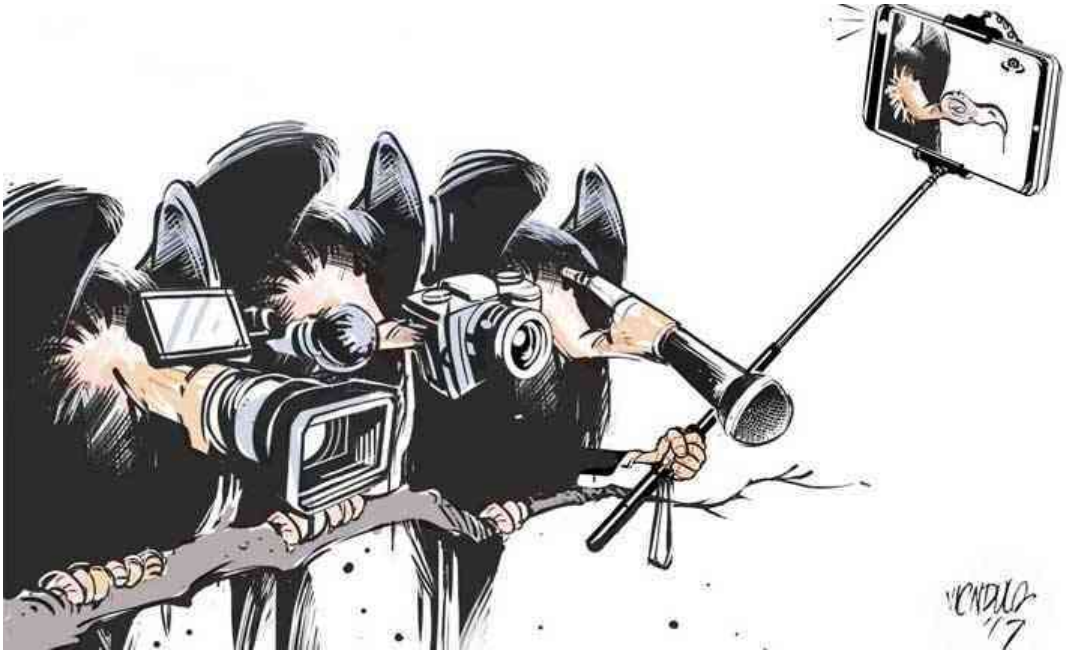

मुझे उत्तर प्रदेश का वह रिपोर्टर याद आ रहा है जिसने प्राइमरी स्कूल में मिड डे मील में नमक रोटी खाते बच्चों पर रिपोर्टिंग की थी और उसपर सरकारी कार्यवाही हो गई थी। यह पिछले साल सितंबर महीने की ही बात है। वह रिपोर्टर कहाँ है कैसा है किसी को नहीं पता। किसी की गिरफ्तारी पर चार दिन कैंपेन चलता है फिर मामला ठंडा हो जाता है। सुधा भारद्वाज को दो साल से भी अधिक हो गए जेल में।... कुछ लोग हैं जो लगातार इस बात को उठाये हुए हैं। कुछ दिन पहले ही बिलासपुर की सामाजिक कार्यकर्ता अधिवक्ता प्रियंका शुक्ला ने इसके लिए सड़क पर उतरकर साथियों के साथ आवाज उठाई थी। उनका प्रयास अब भी जारी है। कुछ दिन पहले ही प्रियंका शुक्ला के साथ बिलासपुर पुलिस ने मारपीट भी की। क्यों की? क्योंकि प्रियंका शुक्ला एचआईवी पीड़ित बच्चियों की मदद के लिए आगे आई थीं। मारपीट करने वालों पर कार्यवाही का इंतजार प्रियंका कर रही हैं। मैं भी कर रहा हुँ।

उमर खालिद को भी परसों गिरफ्तार कर लिया गया। आवाज उनके लिए भी उठ रही है। उठनी चाहिए। लगातार उठनी चाहिए। हर उस व्यक्ति के लिए आवाज उठनी चाहिए जिसे राजनीतिक कारणों से जेल में निर्दोष होने के बावजूद ठूस दिया गया है।

मैंने टी. वी. से ध्यान हटाने के लिए दीवारों को देखना शुरू किया। पेंट अच्छा था। कुछ फूल पत्ती के अलावा महापुरुषों की तस्वीरें भी टंगी थी दीवार पर। अंदर भी भगवान की तस्वीरें थी। पर ये वाली साफ सुथरी थीं। एक ही घर में भगवान के साथ भेदभाव दिख रहा था। बाहर के भगवान को साफ़ क्यों नहीं किया जाता था यह फादर ही जाने। इन सबको देखते हुए मेरी निगाह भगतसिंह पर जा टिकी। मेरी आँखें तब फटी की फटी रह गईं जब मैने भगतसिंह के ठीक बगल में सावरकर की फोटो देखी। यह कैसा मेल है?

यह मेरे लिए आश्चर्य का विषय था। क्या फोटो लगाने वाले ने भगतसिंह को पढ़ा है? क्या उसने सावरकर की जीवनी, उनकी विचारधारा को पढ़ा है? यदि दोनों को पढ़ा है तो ये कैसे संभव हुआ कि दोनों को अगल बगल टांग दिया है?

भगतसिंह के साथ गांधी फिट होते हैं। जब बम का दर्शन से लेकर धार्मिक कट्टरता आदि पर भगतसिंह को पढ़ते हैं तो लक्ष्य गांधी भगतसिंह का एक ही दिखता है। पर यहां दो विपरीत विचारों के व्यक्ति को एक साथ टांगकर टांगने वाले ने जो अतिश्योक्ति पैदा की है वह मिसाल के रूप में देखी जा सकती है। किसी महान संत ने एक दिन कह दिया था- हिप्पोक्रेसी (*मक्कारी)* की भी सीमा होती है।

मैं बैठा यही सब सोच रहा था कि फादर वाशरूम से बाहर आये। कहने लगे- हेलो मिथुन... क्या हाल है?
मैंने कहा- बढ़िया है अब तो। आप बताइए सर।

फादर बोले- ठीक है यार।

फिर टी. वी. को दस सेकंड तक देखने के बाद बोले- देख रहे हो क्या गंध मचा रखी है। बेचारी का घर तोड़ दिया।

यह बात उन्होंने दुःखी होते हुए कही थी।

मैं उनके दुख को हल्का करने की सोच रहा था। मैंने कहा- गलत तो हुआ है। किसी का घर नहीं गिराना चाहिए। गलत तरीके से कोई बन भी गया है तो थोड़ी मोहलत देनी चाहिए।

उन्होंने 'हुँ' कहा। फिर 'राइट' कहा। थोड़ा गंभीर हुए।

मैंने उनकी गंभीरता को देखते हुए कहा- सुप्रीम कोर्ट भी 48 हजार के करीब रेल के किनारों के झोपड़े तोड़ने का आदेश दे चुका है। बेचारे सब कहाँ जाएंगे। ऊपर से सुप्रीम कोर्ट ने यह भी कहा है कि इसपर राजनीति न हो। सुप्रीम कोर्ट को घर तोड़ने के आदेश से पहले उनमें रहने वालों की रहने के लिये वैकल्पिक व्यवस्था करनी चाहिए थी।

उन्होंने इस बात को जैसे सुना ही नहीं। बात को अलग दिशा में मोड़ते हुए कहने लगे- आजकल खूब सब्जियों की गाड़ियां लगने लगी हैं न? क्या सब्जियां सस्ती हो गईं?

मैंने कहा- आलू 50, टमाटर 70, प्याज 40 पर है। यह सस्ता तो नहीं है।

वे दाढ़ी खुजाते हुए बोले- फिर इतने ठेले कैसे आ गए? यह सब तो सस्ता होने पर दिखते हैं न?

मैंने कहा- सब नए लोग हैं। अलग तरह के काम करने वाले काम बंद होने से सब्जी, फ्रूट, चाय यही सब का काम कर रहे जीवन जीने के लिए। सरकार ने तो रोजगार के मामले में हाथ खड़े कर दिये ऐसा लगता है।

उन्होंने बात फिर घुमा दी। कहने लगे- चीन में देख रहे हो क्या चल रहा है? सरकार बहुत बेहतर कर रही है। रियली डूइंग वेरी गुड। चीन से सामना करना और टिके रहना बड़ी बात है। अमेरिका भी पंगे लेने से कतराता है। पर मोदी जी'ज ट्रिक एंड राजनाथ'स एक्शन एक्चुअली वेरी गुड।

मैंने कहा- हां वो तो है। पर सरकार इंटर्नल मामले में थोड़ा ध्यान दे लाइक, रोजगार, स्वास्थ्य, किसान तो...

उन्होंने बात बीच में ही काट दी। कहने लगे- कितना हुआ टोटल अमाउंट सब्जी का?
मैंने उन्हें बताया- पिछला बकाया मिलाकर इतना रुपया।

उन्होंने कहा- पिछला वाला बिल क्लियर कर देता हुँ। इस बार का बाद में। वो क्या है न बेटे को कंपनी ने अनिश्चित काल के लिए लीव पर भेज दिया है वह भी विदाउट पे। अपन बाद में एडजस्ट करते हैं।

यह बात उन्होंने थोड़ी निराशा के साथ कही थी। ऐसी निराशा जो आजकल बहुत से चेहरों पर दिख जाती है।

मैंने उन्हें स्माइल देते हुए कहा- ओके सर।

वे पैसे देने लगे। कहने लगे- यार सौ रुपये कम हैं।

थोड़ा इधर उधर देखने के बाद फिर बोले- ये सौ आज वाले में ऐड कर दो अगली बार सब क्लियर।
मैंने फिर स्माइल दी और कहा- ओके सर। नो प्रॉब्लम।

मैं जाने के लिए आगे बढ़ा। फादर ने रिमोट उठाकर टी. वी. का चैनल बदल दिया। एक ऐंकर सा दिखने वाला आदमी पता नहीं क्या चिल्लाये जा रहा था। बाहर आते आते मेरी निगाह फिर से भगतसिंह और सावरकर के फोटो पर पड़ी। मैं रास्ते भर दोनों में समानता ढूंढता रहा। एक समानता मिली। दोनों नास्तिक थे। पर अपनी अपनी नास्तिकता है कोई समाज पर मर खप जाता है कोई अवसरवादी हो लड्डू खाता है।

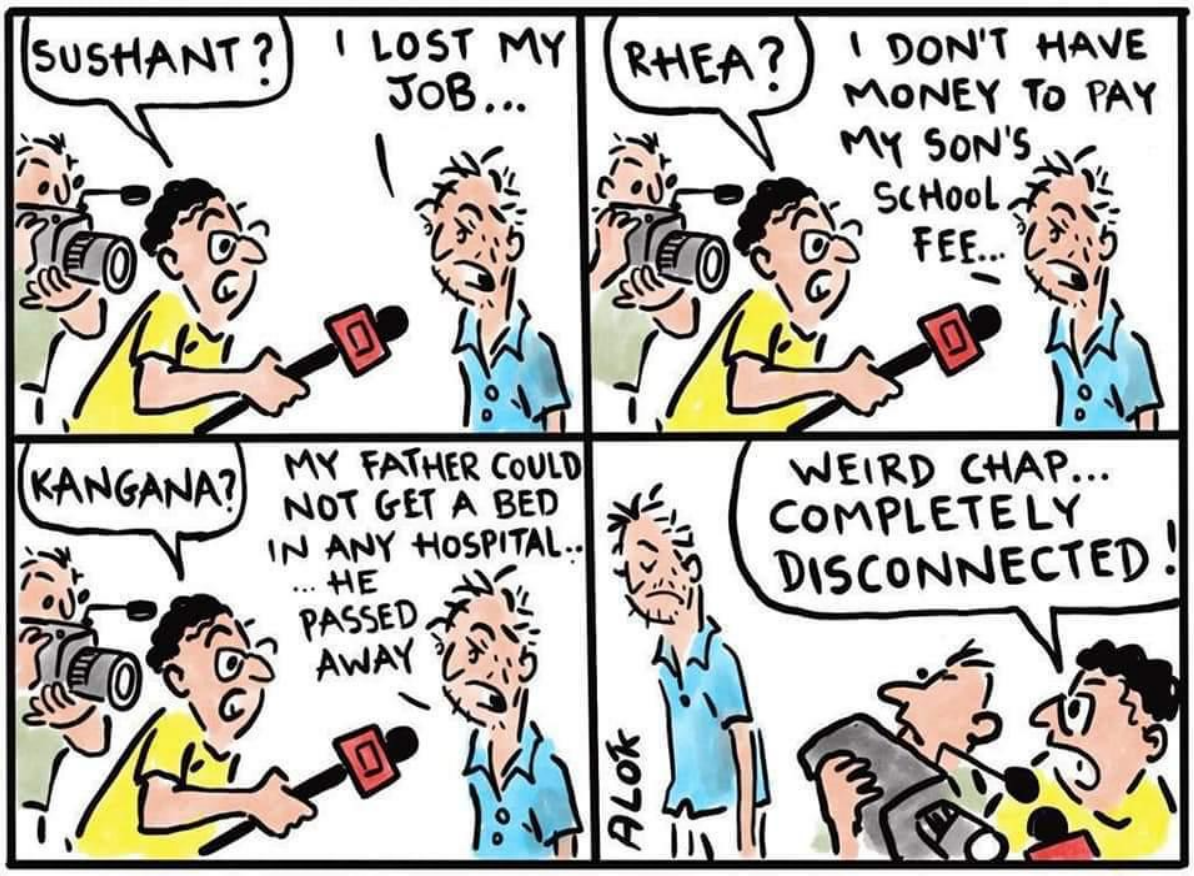

मैं यूपी छोड़ रहा हुँ, मेरी गाड़ी भी पलट सकती थी

ज़ाकिर अली त्यागी

कुछ ही दिन पहले, उत्तर प्रदेश के वरिष्ठ अधिकारी ने जानकारी दी कि इस वर्ष जिन 139 लोगों पर NSA लगाकर जेल भेजा गया है उनमे से 76 पर गौकाशी का आरोप लगाया गया है। इसके अलावा, प्रदेश मे 3847 लोगों को गौकाशी या गौ-तस्करी के आरोप मे गिरफ्तार किया गया है। निश्चित तौर पर इनमे से अधिकतर लोग मुस्लिम समुदाय के हैं। यहाँ यह बता दें कि कई गौशालाओं मे सैकड़ो गाय भूख-प्यास से मरी हुई पायी गयी हैं। इन गौशालाओं को सरकारी मदद भी मिलती है लेकिन प्रबन्धकों के खिलाफ किसी प्रकार की कार्यवाही नही की गयी है। प्रदेश मे न थमने वाले अन्याय का एक उदाहरण:

रात 10 बजे मेरठ जेल से 16 दिन बाद मेरी रिहाई हो गई है, मैं जल्द यूपी छोड़ रहा हुँ, यदि ये ही हाल रहा तो वो दिन दूर नही जब यूपी पुलिस मुझ पर गौकशी के बाद हत्या,बलात्कार,लूटमार,चोरी और आर्म्स एक्ट के तहत भी फ़र्ज़ी मुक़दमे दर्ज़ कर जेल में सड़ा सकती है।

मुझे नही मालूम कि अचानक मेरे साथ क्या हुआ, बस इतना जानता हुँ कि तारीख़ बदलते ही 25 अगस्त की रात 12:30 के करीब मैं रवीश कुमार का प्राइम टाइम शो को अपने लैपटोप पर यूट्यूब में देख रहा था, अचानक से बैठक का दरवाज़ा खटखटाया जाता है। मैंने दरवाज़ा खोला तो लगभग 20 पुलिसकर्मियों ने पूरे घर को घेर रखा था, सादी वर्दी में पुलिसकर्मियों ने मुझसे मेरा नाम पूछा ,नाम ज़ाकिर बताने पर बोले कि अच्छा तू ही है वो योगी-मोदी पर लिखने वाला! उन्होंने मुझे अपने कब्ज़े में ले लिया और बाक़ी पुलिसकर्मी घर मे घुस गये। अंदर घुसे

पुलिसकर्मी मेरे घर की तलाशी ले रहे थे और घर की महिलाओं को गालियां दे रहे थे। तलाशी के बाद सभी पुलिसकर्मी घर से बाहर आये और लाठी डंडो और हथियारों के साये मुझे अपनी गाड़ियों तक ले गये !

... जंगल मे गाड़ियों को अचानक से रोका गया। मैं थोड़ा घबराया कि शायद मेरा एनकाउंटर करने की तैयारी है, लेकिन कुछ देर बाद गाड़ियों को फ़िर से स्टार्ट कर दूसरे थाने की सीमा में घुस गई तो... कुछ देर बाद रोड पर गाड़ी चढ़ने के बाद किला थाने की तरफ़ को मुड़ गई,और थाने में पहुंचे तो मेरी जेबों की तलाशी लेते हुए गालियां देते हुए मुझे हवालात में डाल दिया गया। एक पुलिसकर्मी ने मुझसे मालूम किया कि क्या करता है। मैंने जवाब दिया कि सुभारती यूनिवर्सिटी से पत्रकारिता का छात्र हुँ। गालियों की रफ़्तार बढ़ गई,काफ़ी गालियां मिली लेकिन मैं तो अफ़सोस में था कि किस जुर्म में हवालात में रखा गया है? क्या मैं सत्ता के हर ग़लत कार्य, नीति का आलोचक हुँ इसलिए तो किसी मामले में हिरासत में नही लिया गया हुँ? लेकिन मैं खुद से ही सवाल जवाब करता रहा क्योंकि हवालात के पास तो कोई पुलिसकर्मी जवाब देने वाला न था। जैसे तैसे रात गुज़र गई।

सुबह 11 बजे ग्राम प्रधान तालिब चौधरी और गांव के कुछ गैर मुस्लिम लोग थाने पहुंचे। ग्राम प्रधान मुझसे मेरे अंकल के साथ हवालात के पास मिलने पहुंचे तो उन्होंने मुझे मामले से अवगत कराया कि तुझे गौकशी के आरोप में गिरफ्तार किया है और खेत मालिक यानी शिक़ायतकर्ता भी आये है। शिकायकर्ता जाट समुदाय से है। उन्होंने इंस्पेक्टर से मुझे उक्त घटना में बेक़सूर बता छोड़ देने की अपील की थी लेकिन इंस्पेक्टर मिथुन दीक्षित ने उनकी एक तक न सुनी और त्वरित एक नाबालिग बच्चे ज़ुबैर के साथ गौकशी के आरोप लगा, चालान बना दिया। गांव के लोगों को गांव लौटना पड़ा क्योंकि अब मेरा जेल जाना तय हो चुका था। उस गौकशी के मामले में हिन्दू संगठनों ने क़ई प्रदर्शन कर डाले थे। बीजेपी नेताओं के प्रदर्शन को ध्यान में रखते हुए इंस्पेक्टर ने मुझे जेल भेजने की तैयारी कर डाली और 1 झोले में चाकू, छुरिया, कुल्हाड़ी मेरे पास पुलिसकर्मियों द्वारा लाई गई और उस झोले पर जबरन मुझसे साइन कराये गये। मेरे पूछने पर भी मुझे नही बताया गया कि मेरे साथ ऐसा क्यो और किसके इशारे तथा किस सबूत के आधार पर किया जा रहा है।

ख़ैर दोपहर 1 बजे मुझे और ज़ुबैर को गाड़ी में बिठा कचहरी ले जाया जा रहा था। पंजाब नेशनल बैंक पर बरसों से ड्यूटी करते आ रहे एक बुजुर्ग होमगार्ड भी मुझे कचहरी ले जाने वाली टीम में शामिल था और बार बार दरोगा से कह रहा था कि साब इस लड़के को मैं जानता हुँ इसे जबरन फसाया गया है। दरोगा कहता है कि जानता हुँ लेकिन क्या करु इसे इंस्पेक्टर जेल भेज रहा है, जो असली गोकश है उनको रुपये लेकर छोड़ देता है और बेगुनाहों को जेल भिजवा रहा है। मैं थोड़ा खुश हुआ कि दरोगा और पुलिसकर्मी भी मेरे हक़ में बोल रहे है। तुरंत मैं दरोगा से पूछता हुँ कि जब आप जानते है तो फ़िर ये गौकश करने वाले हथियार मुझ पर क्यो लगाए जा रहे है तो दरोगा कहता है कि घबरा मत जल्दी छूट जाएगा अदालत सब जानती है कि पुलिस हथियार फ़र्ज़ी ही लगाती है यानी जो हथियार आरोपी से बरामद दिखाये जाते है वो बरामद नही होते बल्कि पुलिस अपने पास से लगाती है और तू तो पत्रकार है जेल से रिहा होने के बाद इंस्पेक्टर के ख़िलाफ़ लिखना। दरोगा मेरी 2017 में हुई गिरफ्तारी के बारे में पूछता है कि क्राइम संख्या बता अपनी, क्या लिखा था जो तू जेल गया था,आख़िर योगी पर क्या लिखा था जो गिरफ्तारी हुई? मैंने दरोगा को सारी गिरफ्तारी की जानकारी दी तो दरोगा बोला कि घबराना मत चार्जशीट बनाऊंगा तो रियायत कर दूंगा।

उसके बाद रास्ते में मेरा मेडिकल कराया गया जिसमें काफ़ी वक़्त लगा और कचहरी पहुंचे तो जज साहब गाड़ी में बैठ रवाना हो रहे थे, 1 घंटे तक पुलिस की हिरासत में अदालत के सामने खड़ा रहा, 5 बज चुके थे, फिर पुलिस वहां से मुझे कचहरी में दूसरी तरफ़ ले जाती है शायद जो जज साहब रवाना हो रहे थे वो दूसरी तरफ़ किसी कमरे में आराम फरमा रहे थे। ना मैंने जज को देखा ना जज ने मुझे देखा। पुलिस हथियारों का झोला जज साहब के कमरे में

ले जाती है और लौट जाती है। गाड़ी मे बिठा फ़िर कोरोना की जांच के लिए हॉस्पिटल ले गई। कोरोना रिपोर्ट का इन्तेज़ार करते रहे। 8 बज चुके थे। रिपोर्ट आई तो अस्थाई जेल गये और 9:30 बजे जेल में डाल दिया गया।

अदालत में जमानत की अर्जी लगाई गई। 1 सितंबर को सुनवाई की तारीख़ मिली। जमानत नही मिली फिर 4 सितंबर को सुनवाई करने के लिए तारीख दी गई। फिर 7 सितंबर तारीख़ मिली तो जमानत याचिका मंज़ूर हुई और बेल मिल गई। 9 सितंबर को रात के 10 बजे 16 दिन बाद रिहाई मिली तो 11 बज घर आया। गांव में मेरी गिरफ्तारी के मामले में अज़ीब अज़ीब खुलासे हो रहे हैं जिसको मैं अब मीडिया के सामने ही रखूंगा। बाक़ी मैं अब यूपी छोड़ने के लिए मज़बूर हो चुका हुँ क्योंकि मुझे टारगेट कर, बिना साक्ष्य के गौकशी के इल्ज़ाम में जेल भेजा गया है। ... ख़ैर पुलिस का शुक्रिया कि मेरा एनकाउंटर नही किया गया वरना योगी जी की 'ठाय ठाय' पुलिस रात के अंधेरे में कही भी गाड़ी पलटा सकती थी।

उत्तर प्रदेश की सरकार ने कई लोगों पर गौकाशी के नाम पर NSA लगाने का काम किया है। ज़ाहिर है की यह सब मुस्लिम ही हैं। और निर्दोष भी। एक अपवाद है डा कफ़ील खान जिनके पीछे योगी सरकार कई सालों से पड़ी है। उनको कई बार गिरफ्तार किया गया है और कई बार उन्हे न्यायालयों ने बरी किया है। 2019 दिसंबर मे जब उन्होने AMU के छात्रों के बीच CAA के खिलाफ भाषण दिया था, तब भी उन्हे गिरफ्तार कर लिया गया था। जब उनकी जमानत खारिज कर दी गयी तब यह सुनिश्चित करने के लिए की वह जेल मे ही रहेंगे, उन पर NSA लगा दिया गया। उन पर देश-द्रोही, जेहाड़े इत्यादि होने के इल्ज़ाम लगाए गए। इस महीने की पहली तारीख को NSA के खिलाफ उनकी सुनवाई इलाहाबाद उच्च न्यायालय मे हुई और प्रमुख न्यायाधीश और एक अन्य न्यायधीश ने इस प्रकार का फैसला सुनाया: बिना किसी हिचक के हम इस नतीजे पर पहुंचे हैं की डा कफील खान पर NSA का लगाया जाना अनुचित और गैर कानूनी था...उन्हे तुरंत रिहा करने का आदेश पारित किया जा रहा है। इस फैसले का स्वागत देश भर मे हुआ।

राजनैतिक आका लोग किस प्रकार दंगे के मामलों में दिल्ली पुलिस को नचा रहे हैं

जुलिओ रिबेइरो

पुराने नौकरशाह दोस्तों से चर्चा के दौरान जो बातें निकल कर आयीं थीं, उनको लेकर मैंने दिल्ली पुलिस अधीक्षक को एक ख़त लिखा है। वे लोग यह महसूस कर रहे थे कि सत्ताधारी पार्टी अर्थात भारतीय जनता पार्टी की शह पर मुसलमानों के साथ, जो भारत का मुख्य अल्पसंख्यक समुदाय है, भारी अन्याय किया जा रहा है। एक साधारण नागरिक को हो सकता है, इस सबका अंदाजा न हो। लेकिन जो लोग राजनैतिक रूप से जागरूक हैं, वे राजनेताओं के द्वारा पुलिस के साथ जो शातिर एवं कुटिल शतरंजी चालें खेली जातीं हैं, उनको साफ़ तौर पर देख समझ सकते हैं।

आइये, सत्ताधारी राजनेताओं द्वारा आजमाए जाने वाले इन दाव पेंचों की जांच की जाय :-

1. दिल्ली पुलिस की स्पेशल ब्रांच ने षड्यंत्र से सम्बंधित एक मामला दर्ज किया है। एफ।आई।आर। में षड्यंत्र में संभवतः शामिल अठारह लोगों को गिरफ्तार किया गया है। उनमें से अधिकतर शोधकर्ता छात्र हैं, जिनमें कई महिलायें हैं।
2. इन तथाकथित षडयंत्रकर्ताओं को गैर कानूनी गतिविधियाँ निरोधक विधेयक (यूएपीए) के तहत अपराध में फंसाया गया है। यह यूएपीए कानून असल में पूर्ववर्ती टाडा कानून के स्थान पर लाया गया था, लेकिन सख्ती के मामले में यह उस से इक्कीस ही बैठता है, क्योंकि कानून में एक चोर दरवाजे का दुरुपयोग करके गिरफ्तार किये गए आरोपी को अनिश्चित काल के लिए सलाखों के पीछे रखा जा सकता है। चार्ज शीट दाखिल करने के लिए जो तीन महीने का समय निर्धारित होता है, उसकी समाप्ति के एक दो दिन पहले पुलिस उस आरोपी को फिर से गिरफ्तार कर लेती है, ताकि अगले तीन महीनों के लिए बिना मुक़दमा शुरू किये फिर से उसको कैद में रखा जा सके। टाडा नियमों के अंतर्गत जज लोग काफी सतर्क रहते थे कि एक महीने के अन्दर गिरफ्तार लोगों की सुनवाई हो सके। लेकिन यूएपीए के तहत बिना मुकदमे के लम्बी अवधि के लिए बंदीकरण को प्रोत्साहित किया जाता है, जैसा कि महाराष्ट्र के पुणे जिले में भीमा कोरेगांव मामले में चल रहा है। सुप्रीमकोर्ट को इस प्रथा को समाप्त करने के लिए हस्तक्षेप करना चाहिए। अगर दिल्ली पुलिस को यकीन है कि ये युवा छात्र, जो चाहे तो मुसलमान हैं, या वामपंथी हैं, वाकई दोषी हैं, तो तीन महीनों के भीतर चार्ज शीट दाखिल की जानी चाहिए, और आरोपियों को स्वयं को बेकसूर साबित करने के बुनियादी अधिकार का प्रयोग करने का अवसर प्रदान करना चाहिए। लेकिन चार्ज शीट दाखिल करने की तीन महीने की समय सीमा समाप्त होने से ऐन पहले दुबारा से गिरफ्तार करके कानून की भावना को ध्वस्त करना एक कुटिल चाल है, जो अन्यायपूर्ण है।
3. टाडा के अंतर्गत पुलिस उप अधीक्षक तथा उससे वरिष्ठ अधिकारियों के सम्मुख दिए गए इकबालिया बयान को मुकदमे के दौरान गवाही के रूप में मान्यता प्राप्त थी। यह प्रावधान यूएपीए के तहत उपलब्ध नहीं है। पुलिस लेकिन अपने पसंदीदा प्रिंट एवं इलेक्ट्रॉनिक मीडिया में तथाकथित अपराध स्वीकार कर लेने की खबर को गुपचुप तरीके से प्रसारित करके इसको नाकाम बना देती है, जो नाइंसाफी है।
4. इस पर भी दिल्ली पुलिस यह दावा करती है कि वह दोनों समुदायों के प्रति निष्पक्ष है! इसका कहना है कि जो 753 मामले दर्ज किये गए हैं, उनमें से 410 मामले मुसलमानों की ओर से दर्ज किये गए हैं। वास्तविकता मगर ये है कि कुल गिरफ्तारियों में 75 फीसद मुसलमान तथा 25 फीसद हिन्दू लोग हैं। संपत्ति को जो नुकसान पहुंचा है, वह अधिकतर अल्पसंख्यक समुदाय की हैं। हिन्दुओं के किसी पूजा स्थल को कोई नुकसान नहीं पहुंचा है। दूसरी ओर कई मस्जिदें क्षतिग्रस्त हुईं हैं। दंगों में जान गंवाने वालों में मुसलमानों की संख्या हिन्दुओं की तुलना में दुगुनी है।

ये संख्याएं अपनी दास्ताँ खुद बयान करती हैं। दंगे के पहले दिन मुसलमानों ने अवश्य प्रतिकार किया था। लेकिन दूसरे दिन से आखिर तक बहुसंख्यकों का ही बोलबाला रहा, जैसा कि अपेक्षित था। साम्प्रदायिक दंगों के बारे में मेरा स्वयं का अनुभव यह रहा है कि अल्पसंख्यक समुदाय को हमेशा मुंह की खानी पड़ती है। हालांकि मुसलमानों के बीच के गुंडे मवाली तत्व अपने धार्मिक समुदाय की सुरक्षा के लिए संगठित होते हैं, मगर निरा संख्या बल अंततः भारी पड़ता है।

अनुवाद अशोक गर्ग

प्रशान्त भूषण के मामले का महत्व

सुभाषिनी अली (संकलन – दीप्ति मिश्रा)

कमजोर और दबे कुचले शोषित समाज को न्याय की सबसे ज्यादा जरूरत है, और निश्चित रूप से महिलाएं इसमें शामिल हैं। समाज को एक ऐसी न्याय प्रक्रिया की जरूरत है जो संवेदनशील हो और जो सबसे ज्यादा जरूरतमंद है उनके बारे में सोचे।

पिछले दिनों श्री प्रशान्त भूषण जी का न्यायालय की अवमानना का केस बहुत चर्चित रहा। श्री प्रशान्त भूषण ने 27 जून और 29 जून को दो ट्वीट किये, उन दोनों ट्वीट का स्वतः संज्ञान लेते हुए "सर्वोच्च न्यायालय" ने श्री प्रशान्त भूषण पर न्यायालय की अवमानना का मुकदमा दायर किया।

न्यायपालिका की अवमानना को लेकर बहुत सी बहस हमारे देश में ही नहीं अपितु पूरी दुनिया में होती रहती है, इसका प्रमुख कारण यह है कि लोकतंत्र में न्यायपालिका ही वह संस्था है जो कार्यपालिका पर नियंत्रण रख सकती है।

बहुत से रिटायर्ड जज और बुद्धिजीवियों का मानना है कि सही संदर्भ में की गई आलोचना का न्यायपालिका को स्वागत करना चाहिए उस पर विचार करना चाहिए न कि अवमानना का केस चलाना चाहिये।

यदि देश के इतिहास पर नजर डालें तो कुछ बहुत ही महत्वपूर्ण केस रहे हैं जो कि अवमानना के साथ जुड़े हैं।

1919 का महात्मा गांधी और उनके अखबार के प्रकाशक महादेव देसाई के खिलाफ बाम्बे हाईकोर्ट की अवमानना का केस। केस का संदर्भ इस प्रकार है कि रौलेट एक्ट के विरोध में जालियांवाला बाग में जनरल डायर द्वारा की गई दमनात्मक कार्यवाही का विरोध पूरे देश में हुआ और आन्दोलन हुए इस पर बाम्बे हाईकोर्ट ने दो वकीलों के खिलाफ आदेश पारित किये कि वह लोग आन्दोलन से जुड़े थे इस कारण क्यों न उन्हें वकालत करने से प्रतिबन्धित किया जाये। जब गाँधी जी के पास वकीलों के मार्फत यह नोटिस पहुंचा तो उन्होंने इस नोटिस को अपने अखबार में छाप दिया और लिखा कि केवल एक डायर नहीं है इस सरकार में अनेक अंग्रेज अफसर डायर हैं जो कि दमन कर रहे हैं। इस पर बाम्बे हाईकोर्ट ने गाँधी जी और उनके प्रकाशक पर गोपनीय अदालती आदेश छापने का कोर्ट की अवमानना का मुकदमा कर दिया, जिसमें पेश होने से गाँधी जी और महादेव देसाई ने इन्कार कर दिया मजबूरन बाम्बे हाईकोर्ट को सिर्फ चेतावनी देकर केस खत्म करना पड़ा। यह एक बहुत बड़ी जीत मानी जा सकती है।

एक दूसरा केस 1967 का केरला के मुख्यमंत्री, कॉमरेड ई 0 एम 0 एस 0 नम्बूदरीपाद का है, जिन्होंने एक प्रेस कान्फ्रेंस में कहा कि हमारी न्याय व्यवस्था में किसी गरीब को न्याय मिल पाना बहुत मुश्किल है क्योंकि

न्यायपालिका भी वर्गीय शोषण व्यवस्था का एक अंग है। उन्होंने सुझाव दिया कि न्यायाधीशों का चयन का तरीका बदलना चाहिए और न्यायाधीशों का चुनाव होना चाहिए ताकि जनता उनसे न्याय की उम्मीद कर सके।

कॉमरेड नम्बूदरीपाद के विरूद्ध हाईकोर्ट की बेन्च में अवमानना का केस सुना गया, जिसमें उन्हें अवमानना का दोषी कहा गया, इसके विरूद्ध कॉमरेड नम्बूदरीपाद ने सुप्रीम कोर्ट में अपील की और उनके वकील वी0 के0 कृष्णामेनन थे। कृष्णामेनन ने कहा कि कामरेड नम्बूदरीपाद मार्क्सवादी है और मार्क्सवाद कहता है कि समाज का हर हिस्सा उसका वर्गीय चरित्र होता है और न्यायपालिका भी इससे अछूता नहीं है। यह केस बहुत लम्बा चला जस्टिस हिदायतुल्लाह ने कॉमरेड नम्बूदरीपाद को अवमानना का दोषी माना और उन पर रू0 50/- जुर्माना किया, तो उन्होंने जमा कर दिया पर अपनी गलती मानने से मना कर दिया और कहा कि मैं अपनी बात पर अभी भी कायम हुँ। आज भी जब अवमानना का केस आता है तो गाँधी जी का केस और कॉमरेड नम्बूदरीपाद के केस का जरूर जिक्र होता है।

आज के समय में लोग सरकार और न्यायपालिका के खिलाफ बोलने से डर रहे हैं। श्री प्रशान्त भूषण का केस आज के माहौल में लोगों को प्रेरणा देता है। 27 जून एवं 29 जून के ट्वीट का स्वतः संज्ञान लेते हुए सर्वोच्च न्यायालय द्वारा श्री प्रशान्त भूषण पर अवमानना का मुकदमा दायर किया गया उसका जवाब देते हुए श्री प्रशान्त भूषण ने सुप्रीम कोर्ट में जो शपथ-पत्र दाखिल किया उसके कुछ बिन्दु इस प्रकार हैं:--

1. 29 जून के ट्वीट में उन्होंने वर्तमान मुख्य न्यायाधीश पर जो टिप्पणी की थी उस पर उनका कहना है कि पिछले तीन महीनों से सुप्रीम कोर्ट में सामान्य कामकाज नहीं हो पा रहा है, जिसकी वजह से हिरासत में लिए गये नागरिकों के अधिकारों, बेसहारा व गरीब लोगों के मुद्दों की सुनवाई नहीं हो पा रही है, ऐसी स्थिति में बहुत सारे लोगों के बीच बिना मास्क के न्यायाधीश की उपस्थिति बिल्कुल भी उपयुक्त नहीं लग रही थी।
2. 27 जून के ट्वीट के बारे में श्री भूषण का कहना है कि पिछलें 6 वर्षों के दौरान जो देश के हालात रहे हैं, और जो सुप्रीम कोर्ट की भूमिका रही है, खासकर पिछले 4 मुख्य न्यायाधीशों की जो भूमिका रही है उस पर उन्होंने अपनी राय रखी है। पिछले 6 वर्षों में लोकतंत्र का भारी क्षय हुआ है और इसमें सुप्रीम कोर्ट की भी अहम भूमिका रही है।
3. किसी की राय की अभिव्यक्ति को भले ही वह अप्रिय हो अथवा कड़वी हो उसको कोर्ट की अवमानना की श्रेणी में नहीं रखा जा सकता। लोकतांत्रिक व्यवस्था का सार यह होता है कि न्यायपालिका सहित सभी संस्थाएं देश के नागरिकों के हित के लिए काम करती है।
4. दिल्ली हाईकोर्ट के पूर्व मुख्य न्यायाधीश जस्टिस ए 0 पी0 शाह ने 27 जुलाई, 2020 को हिन्दू अखबार में छपे लेख में अपनी राय देते हुए कहा कि सुप्रीमकोर्ट के सामने दर्जनों संवैधानिक मामले लंबित हैं, जिनका निपटारा करने की सख्त जरूरत है जैसे-सीएए, इलेक्टोरल बांड्स, जम्मू और कश्मीर से आये हैबियस कॉर्पस के मामले इत्यादि। इसलिए यह बहुत निराशाजनक है कि इस खास दौर में अति आवश्यक मामले का निपटारा करने के बजाय सुप्रीमकोर्ट ने दो ट्वीटों को अपने कोप का भाजन बनाया है।

5. इन वर्षों के दौरान अभिव्यक्ति की आजादी एवं असहमति के अधिकार पर अभूतपूर्व हमले हुए हैं। सरकार के आलोचकों पर लिंच भीड़ द्वारा सड़कों पर हमले किये गए हैं, जिसको सरकार का संरक्षण एवं पुलिस की मौन स्वीकृति प्राप्त होती है। कई मामलों में तो उन आलोचकों पर देशद्रोह का मुकदमा ठोका गया है, जबकि स्वयं सुप्रीमकोर्ट ने हिंसा अथवा सार्वजनिक अव्यवस्था न भड़काने की स्थिति में देशद्रोह का आरोप लागू न करने की व्यवस्था दी हुई है। दलित एवं अल्पसंख्यक समुदाय खासतौर पर लिंच भीड़ के निशाने पर रहे हैं।
6. जम्मू कश्मीर में संसद ने संवैधानिक रूप से आवश्यक राज्य की संविधान सभा की सहमति के बगैर राज्य के विशेष दर्जे को समाप्त कर दिया है, रातों रात राज्य का बंटवारा करके दो केन्द्र शासित प्रदेशों में बदल दिया गया है।
7. भारत के पिछले चार मुख्य न्यायाधीशों के कार्यकाल के दौरान सुप्रीमकोर्ट ने मूलभूत संवैधानिक मूल्यों को नागरिकों के मूल अधिकारों को तथा कानून के राज्य को बचाने की अपनी संवैधानिक जिम्मेदारी को तिलांजलि दे रखी है।

श्री प्रशान्त भूषण जी के हलफनामे मे वह तमाम मुद्दे मौजूद हैं जो हम सबको पिछले कई महीनो से विचलित कर रहे हैं। उन्होने इन्हे बड़े ही स्पष्ट और निर्भीक तरीके से उठाकर, सर्वोच्च न्यायालय को एक तरह से कटघरे मे खड़ा कर दिया है। उनके समर्थन मे हजारों वकील, न्यायाधीश, बुद्धजीवी, मानव अधिकार कार्यकर्ता, राजनैतिक कार्यकर्ता इत्यादि खड़े हुए और उनके मामले पर चर्चा देश भर मे गूंजी। इसीका नतीजा था की जिस न्यायालय ने उन्हे कड़ी सज़ा सुनाने की सोची थी उन्होने उन पर एक रुपए का जुर्माना लगाया। हम सब को इस मामले से बड़ा सबक लेना चाहिए और न्याय प्रक्रिया जिस तरह से आम लोगों को न्याय से वंचित रख रही है और उनको निराश कर रही है, इसके खिलाफ संघर्षो मे भाग लेने के लिए तयार रहना चाहिए।

मानव श्रम और औरत के स्वभाव में बसे संगीत का महत्व बताती वेब सीरीज 'बंदिश बैंडिट्स'

संध्या शैली

महामारी के इस दौर में इन्सान ने अपने मनोरंजन के नये साधन खोज लिये हैं। वेब सीरिज उन्ही मे से एक है। इन वेब सीरिज और इंटरनेट पर ही रिलीज होने वाली फिल्मों और सीरीज़ में कुछ बेहद प्रभावशाली हैं। एमेज़ान प्राइम पर हाल में एक ऐसी ही वेब सीरीज दिखायी जा रही है जिसका नाम है 'बंदिश बैंडिट्स'। अभी इस सीरीज का पहला सीजन रिलीज हुआ है। नसीरूद्दीन शाह और अतुल कुलकर्णी जैसे दिग्गज कलाकारों के सामने नये कलाकारों ने जिस लगन और मेहनत के साथ इसमें काम किया है वह देखने लायक है।

लंबे समय के बाद हिंदुस्तानी संगीत और उसकी शास्त्रीयता को आधार बना कर इंटरनेट पर कोई हस्तक्षेप हुआ है। बेहद मधुर और दिल को छूने वाली धुनों से सजे और शास्त्रीय रागों के आधार पर बने गीतों वाली इस वेबसीरीज को देखते हुये कुछ दृश्यों में तेलुगू फिल्म 'शंकराभरणम' की याद आती है जो शास्त्रीय संगीत पर बनी एक आल टाइम हिट फिल्म मानी जाती है।

इस वेब सीरीज के बारे में उसकी तकनीक, प्रस्तुति, कथानक, कलाकारों, तकनीक और उसके निर्देशन आदि के बारे में काफी समीक्षायें लिखी जा रही हैं। इन समीक्षाओं में उस चुपचाप बहने वाली मुख्य धारा का जिक्र नहीं है जो कलाकार और परफार्मर मे अंतर दिखाने की, कलाकारों पर बाजार की बेदर्द और निर्मम पकड सामने लाने की, लाजवाब कलाकार के पितृसत्तात्मक अहंकार और उस पुरूष से बड़ी औरत कलाकार के श्रम में संगीत ढूंढने और पोसने के प्रयत्नो में प्रवाहमान है।

बाजार ने कला और कलाकार दोनों को बिकने वाली वस्तु बना दिया है। बिकाऊ परफार्मेंस ही अच्छी कला कहलाने लगा है। ऐसे में कला को संवारने में लगने वाली मेहनत, लगन, और कला में डूबने वाली महारथ को हासिल करना बेकार लगने लगा है। इसके साथ ही ईमानदार और वर्तमान बाजार की कुटिलताओं से अनभिज्ञ कलाकारों की मार्मिक तकलीफदेह जिंदगी को भी इस सीरिज ने सफलता के साथ चित्रित किया है।

एक ओर भयानक आर्थिक तंगी से जूझते लेकिन अपने संगीत की शुद्धता को बचाने के लिये बेचैन एक महान गायक और उसके भीतर छुपे हुये पुरूषवादी अहंकार का संघर्ष, कहानी की रीढ है। महान गायक की स्वाभिमानी बहु और अन्य महिला चरित्रों का भी अलग अलग अपनी अपनी जिंदगियों में अपने निर्णयों पर अटल रहकर स्वाभिमानी जीवन जीना इस वेब सीरीज की जान है। सदियों से चल रहा औरत का उत्पीड़न, जिसे समाज की मंजूरी की मुहर हासिल है, इसमें बहुत महीन और निर्मम तरीके से दिखाया गया है।

किसी भी सीरीज की कहानी को कसे हुये तरीके से विकसित करना उसके निर्देशक, पटकथा लेखक और निर्माता की मानसिकता और तकनीक पर उनकी पकड़ पर निर्भर करता है जिसे इस टीम ने इस सीरीज के पूरे दस एपिसोड्स में बनाये रखा है।

इस पकड को हर एपिसोड में दर्शक महसूस कर सकता है। उदाहरण के लिये जब नायक की मां उसे अपनी कठिन परीक्षा के लिये तैयार करती है, वह पहले संगीत नहीं बल्कि मानव श्रम में छिपे हुये संगीत का परिचय कराते हुये पहले वह उससे काम करवाती है। सब्जी काटने से लकर कपड़े धोने, बर्तन मांजने से लेकर नृत्य की शिक्षा तक के काम करवाना और बाद में हर लोक कलाकार के पास समय बिताने के लिये उसे भेजना, संगीत की शिक्षा का हिस्सा है इस बेहद मानवीय संदेश को वही औरत दे सकती है जिसने अपने संगीत को उन तमाम कामों के माध्यम से जिंदा रखा है।

नसीरूद्दीन शाह, अतुल कुलकर्णी, शीबा चद्ढा, अमित मिस्त्री और राजेष तेलंग जैसे मंझे हुये कलाकारों के साथ ऋत्विक भौमिक और श्रेया चौधरी के ताजे अभिनय से सजी यह वेब सीरीज अपने पहले सीजन में दर्शकों का मन मोह चुकी है।

इस वेब सीरिज का सबसे मजबूत पक्ष है इसका संगीत। शुद्ध शास्त्रीय संगीत और लोक संगीत के साथ साथ पश्चिमी संगीत को मिलाकर बने कई गाने सिद्धहस्त संगीतकार शंकर महादेवन, अहसान नूरानी और लाय मेनडोसा ने बेहद सुंदर रागों और लयों में पिरोया है।

आनंद तिवारी, ‘बरफी’ फिल्म में अनुराग बसू के सहायक निर्देशक, इस वेब सीरिज के युवा निर्देशक हैं।

फिल्म 'शकुन्तला देवी', स्थापित परम्पराओं को चुनौती देती एक असाधारण औरत की कहानी

मधु गर्ग

अनु मेनन द्वारा निर्देशित फिल्म 'शकुंतला देवी' ह्यूमन कम्प्यूटर नाम से प्रसिद्ध गणितज्ञ 'शकुंतला देवी' की जीवन की सच्ची कहानी पर आधारित है। इस फिल्म की कहानी शकुंतला देवी की बेटी अनुपमा की नजर से लिखी गई है। यह फिल्म एक ऐसी औरत के जीवन संघर्षों और कामयाबी को दिखाती है जिसने समाज के परंपरागत ढांचे में बंधने से इन्कार कर दिया। बचपन से ही वह एक बड़ा आदमी नहीं 'बड़ी औरत' बनने का सपना देखती है। बचपन मे ही आये अपने इस आत्मविश्वास के कारण वह अपने जीवन मे बार बार 'औरत' की परम्परागत छवि को चुनौती देती है।

शकुंतला की कहानी उसके बचपन से शुरू होती है जब पहली बार उसके अप्पा (पिता) को अपनी बेटी की असाधारण प्रतिभा का पता लगता है। वह संख्याओं के साथ खेलती है और पल भर में गणित के मुश्किल से मुश्किल सवाल हल कर देती है। उसके पिता बेटी की असाधारण प्रतिभा का इस्तेमाल परिवार को ज़िंदा रखने के लिए करते हैं। शकुंतला का अपने माता-पिता से भ्रम तब टूटता है जब वे उसकी कमाई से दिव्यांग बहन शारदा का इलाज नहीं करवाते हैं और उसकी मौत हो जाती है। यह घटना ने उसके अंदर अपने माता-पिता के प्रति नफरत पैदा कर दी और इसी नफरत के साथ वह बड़ी होती है। पिता के तानाशाह रवैय्ये के प्रति उसकी मां की चुप्पी उसको यह तय करने के लिए प्रेरित करती है कि वह अपनी मां जैसी नहीं बनेगी।

जवानी मे एक प्रेमी की बेवफाई से आहत होकर वह गणित के शो करने लंदन पहुंच जाती है। लंदन में वह प्रसिद्ध हो जाती हैं। जब वह एक बार कंप्यूटर को भी गलत सिद्ध कर देती है तो उसे 'ह्यूमन कम्प्यूटर' का नाम दे दिया गया।

अपने दिल की सुनने वाली और खुलकर हंसने वाली जवान औरत से अधिक डरावना कौन हो सकता है? अपने बारे मे यह बात वह खुद ही कहती थी! लेकिन अपने अनोखेपन से उसे बड़ी तसल्ली भी मिलती है और एक दृश्य में वह कहती है कि जब मैं स्टेज पर होती हुँ तो मुझे देखने वाले लोगो के चेहरों पर इस बात की हैरानी देखकर कि साड़ी पहनी औरत गणित के बड़े सवाल हल कर रही है तो मुझे बहुत अच्छा लगता है।

शकुंतला की जिंदगी में एक मोड़ तब आता है जब उसकी मुलाकात कलकत्ता के आई.ए.एस. अफसर परितोष बनर्जी से होती है। परितोष की बुद्धिमत्ता से शकुंतला प्रभावित होती है और दोनों का विवाह हो जाता है। वह मजाक में परितोष से यह कहना नहीं भूलती कि उसने शादी इसलिए की है कि उसे एक बुद्धिमान आदमी से बुद्धिमान बच्चा चाहिए। मां बनने के बाद उसके जीवन में एक अंतर्द्वंद शुरू हो जाता है कि वह अच्छी "मां" बने या अपनी महत्वाकांक्षाओं को पूरा करे। वह बार-बार अपने मन से सवाल पूछती है और कहती है कि वह सिर्फ "मां" हीं नही है वह "मैं" भी है। इसी "मैं" को पाने के लिए अपनी बच्ची को पति के पास छोड़कर वह शो करने के लिए दुनिया के

दौरे पर निकल पड़ती है। उसका नाम गिनीज बुक ऑफ वर्ल्ड रिकॉर्ड में दर्ज होता है। फिर, जब बच्ची से दूरी वह बर्दाश्त नहीं कर पाती, तो वह लौट आती है। अपने पति के सामने प्रस्ताव रखती है कि वे तीनों एक साथ विदेश में रहेंगे। जब परितोष राज़ी नही होता तो वह सवाल करती है कि यदि पति के लिए पत्नी अपना कैरियर छोड़ सकती है तो फिर पति पत्नी के लिए ऐसा क्यो नहीं कर सकता? दोनों अलग हो जाते है। पति का कहना है कि शकुंतला के अंदर तूफान है और तूफान का सामना करना ठीक नहीं! शकुंतला 'पेड़' बनकर एक जगह टिक नहीं सकती और पति 'बंजारा' बनकर इधर से उधर घूम नहीं सकता। '60 के दशक में महिला स्वतंत्रता की बातें दबी जुबान से ही की जातीं थी। उस समय इतने स्पष्ट रूप से अपनी बात कहना शकुंतला द्वारा स्थापित परंपराओं के खिलाफ एक विद्रोह था।

शकुंतला अपनी बेटी अनु को लेकर फिर से गणित के प्रदर्शन की दुनिया में लौटती है। 'माँ' की स्थापित स्टीरियो टाइप छवि को तोड़ते हुए वह अनु को अच्छी परवरिश देने के साथ साथ गणित के प्रति अपने जुनून को दाँव पर नहीं लगाना चाहती है। मां के साथ देश-विदेश घूमते, बच्ची अनु के सपने छोटे होते जाते हैं। वहीं मां के सपने बड़े होते जाते हैं। अनु अपने बाबा (पिता) को लिखे पत्रो मे अपने अकेलेपन के एहसास को व्यक्त करती है। मां के व्यक्तित्व के मुक़ाबले, अनु की अपनी पहचान व अपना व्यक्तित्व बौना रह जाता है और, धीरे-धीरे, मां के प्रति उसकी नफरत बढ़ने लगती है। 'शकुंतला की बेटी' कहलाना उसे पसंद नहीं है और उसकी अपनी "पहचान" को लेकर जो छटपटाहट वह फिल्म में साफ दिखाई देती है।

एक दूसरे से दूर होने के बाद, मां बेटी इस शर्त पर फिर साथ रहने लगते हैं की शकंतुला बेटी को पूरा वक्त देगी। अनु लंदन में मां की मदद से एक बिजनेस शुरू करती है। फिर उसकी मुलाकात अजय से होती है और दोनो शादी करना चाहते हैं। शकुंतला उस परम्परागत ढांचे को तोड़ना चाहती है जिसमें बेटी का ससुराल जाना अनिवार्य शर्त है लेकिन अनु अब अपनी मां का साया बनकर नहीं जीना चाहती। वह अपनी स्वंतन्त्र पहचान चाहती है।

शकुंतला और अनु मे दूरियां इतनी बढ़ जाती है कि शकुंतला लंदन मे अनु की सारी संपत्ति बेचकर उसपर मुक़द्दमा कर देती है। अनु व अजय लंदन पहुंचते हैं। मां बेटी का सामना होता है और अनु को जब यह पता चलता है कि शकुंतला ने यह सब कुछ उसे अपने पास बुलाने के लिए ही किया है तो उसकी आंखो से बचपन से पैदा रोष के आँसू फूट पड़ते हैं। उसे बचपन की एक-एक घटना याद आती है। वह यह भी समझ जाती है कि उसने अपनी माँ को केवल एक 'माँ' के रूप मे देखा न कि एक 'औरत' के रुप मे समझने की कोशिश की ।

फिल्म का सुखद अंत अनु के इस वाक्य से होता है कि उसकी मां 'सामान्य' नही 'आश्चर्यचकित करने वाली' है।

उसका उसकी मां से रिश्ता किसीके बलिदान पर नहीं बल्कि जिंदगी को अपने-अपने तरीके से भरपूर जीने की आजादी पर टिका है। उसकी माँ जिंदगी की कद्र करना जानती है और उसे गले लगाकर भरपूर जीना चाहती है।

फिल्म 'शकुंतला देवी' दर्शकों के बीच कई सवाल छोड़कर जाती है कि क्या एक असाधारण औरत को असाधारण तरीके से जीने का हक नहीं होना चाहिए? क्यों एक असाधारण औरत को एक परफेक्ट'पत्नी' और

'मां' भी होना चाहिए? यह फिल्म शकुंतला को एक गणितज्ञ होने के साथ-साथ एक ऐसी'औरत' के रूप मे दिखाने में कामयाब है जो परम्परागत ढाँचों के बाहर अपनी स्वयं की शर्तों पर जीने की हिम्मत करती है।

शकुंतला की भूमिका निभा रही विद्या बालन का अभिनय बेहद सराहनीय है और अनु बनी सान्या मल्होत्रा भी अपने पात्र के दर्द को व्यक्त करने में कामयाब रही हैं। शकुंतला के पति के रूप में जीशू सेन गुप्ता का अभिनय भी बहुत सहज है।निर्देशिका के रूप में अनु मेनन शकुंतला देवी के जीवन को स्क्रीन पर सटीक तरीके से दिखने में कामयाब रहीं हैं।

मध्य प्रदेश सरकार का कुपोषित बच्चों पर वार

नीना शर्मा

मध्य प्रदेश में, 2019 के आंकड़े के अनुसार, 11 लाख से ज्यादा बच्चे कुपोषण के शिकार हैं। हर रोज लगभग 100 बच्चे मरते हैं। ऐसे प्रदेश मे सरकार द्वारा बच्चों को पौष्टिक आहार से वंचित रखना सिर्फ इसलिए कि उसकी अपनी मानसिकता बहुत ही संकीर्ण है, से अधिक शर्मनाक कुछ हो ही नहीं सकता है। मध्य प्रदेश मे जन संख्या का बड़ा हिस्सा आदिवासियों और दलितों का है – यह अनुपात देश भर मे सबसे अधिक है। समाज की इन हिस्सों का गरीबी और बेरोजगारी से ग्रसित होना स्वाभाविक है। साथ ही, इन हिस्सों के अधिकतर लोग शाकाहारी नहीं हैं।

मध्य प्रदेश सरकार की महिला और बाल कल्याण मंत्री, इमरती देवी, इससे पहले कांग्रेस की सरकार मे भी इस विभाग की मंत्री थी। उन्होने आंगनवाडियों मे बच्चों को अंडा खिलाने पर ज़ोर दिया था। इमरती देवी स्वयं दलित समाज की हैं और, निश्चित तौर पर, उन्हे गरीब, कुपोषित बच्चों के प्रति संवेदना ही नहीं बल्कि काफी जानकारी भी है। जब कांग्रेस की सरकार को पलटने का काम सिंधिया के नेत्रत्व मे किया गया तो इमरती देवी ने भी उनका साथ दिया।

भाजपा की सरकार मे भी उन्हे अपना पुराना पद मिल गया और, एक बार फिर, उन्होने कुपोषित बच्चो के बारे मे कुछ करने का फैसला लिया। भाजपा की सरकार ने इस अंतराल मे बच्चों का अंडा बंद कर दिया था। इमरती देवी ने सार्वजनिक तौर पर कहा कि वह इस फैसले से सहमत नहीं हैं और बच्चों को फिर से अंडा दिया जाएगा। यहाँ पर यह बताना आवश्यक है कि कई राज्यों मे ऐसा हो रहा है – केरला, तामिल नाडु, दिल्ली, उड़ीशा इत्यादि इसकी मिसाल हैं। पौष्टिक आहार के बारे मे विशेषज्ञों का भी कहना है कि प्रोटीन का सबसे अच्छा और सस्ता स्त्रोत अंडा ही है। जहां अंडा दिया जा रहा है वहाँ उन बच्चों को जो अंडा नहीं खाते हैं, उन्हे केला इत्यादि दिया जाता है।

लेकिन भाजपाई मानसिकता तो विज्ञान से बहुत परे है। भाजपा के लोग शाकाहार को धर्म का हिस्सा मानते हैं जबकि देश की आधी से अधिक आबादी मांसाहारी है। इन तथ्यों से उन्हे कोई मतलब नहीं। नतीजा यह हुआ की इमरती देवी की लाख कोशिशो के बावजूद, आंगनवाड़ी मे बच्चों को अंडा देने का फैसला रद्द कर दिया गया।

सरकार का कहना है की बच्चों को दूध दिया जाएगा। दूध को हजारों आंगनवाडियों मे पहुँचना कितना असंभव होगा और दूध की गुणवता को बनाए रखना कितना मुश्किल, इसके चलते यह फैसला नहीं धोखा ही मालूम देता है। एक ऐसा धोखा जो प्रदेश के बच्चों को कुपोषण के हवाले छोड़ देगा।

मध्य प्रदेश की एडवा की इकाई ने इस मामले मे हस्तक्षेप किया है और सरकार के फैसले की कड़ी निंदा की है।

मुजफ्फरपुर बालिका गृह कांड : न्याय की लम्बी लड़ाई

निवेदिता

एक लंबी लड़ाई के बाद मुजफ्फरपुर बालिका गृहकांड जैसे जघन्य अपराध के मामले में बच्चियों को आखिरकार न्याय मिला हालांकि अभी भी कुछ रसूख वाले अपराधी कानून की गिरफ्त से बाहर हैं। मुझे इस बात की ख़ुशी है कि जो लडाई सड़कों पर और अदालत में लड़ी गयी उसमें हमें न्याय मिला। न्याय की लंबी और थका देने वाली लड़ाई के बाबजूद मैं ये कह सकती हुँ की अँधेरा कितना भी हो संघर्ष ज़ाया नहीं होता। अब लगभग इस मामले को एक साल हो जायेगा। इतिहास बच्चियों के साथ हुए बर्बर और अमानवीय हिंसा को हमेशा याद रखेगा ताकि फिर किसी लड़की के साथ ये दुहराया नहीं जाये। हम कामना करें कि हमारी बच्चियां खून से सनी इस मिट्टी में कभी दफ़न नहीं हो ।

दिल्ली के साकेत कोर्ट परिसर स्थित पॉक्सो अदालत ने ब्रजेश ठाकुर समेत १९ आरोपियों को कई लडकियों के साथ यौन शोषण एवं शारारिक उत्पीडन का दोषी करार दिया है। आरोपियों में ११ पुरुष और आठ महिलाएं हैं। ब्रजेश ठाकुर को पॉक्सो कानून के तहत मरते दम तक जेल मे रहने की सज़ा सुनाई।

कितना भयानक है कि सरकारी संरक्षण में बच्चियों के साथ बलात्कार हो? २०१३ से लगातार बच्चियों के साथ अमानवीय और हिंसक घटना हो रही थी। संरक्षण गृह निजी संस्था द्वारा संचालित थी और उसे बराबर सरकार से आर्थिक सहायता मिल रही थी। संचालक राजनैतिक रूप से सक्षम और सुशासन बाबू, नितीश कुमार, के करीबी थे। उनकी सरकार की महिला कल्याण मंत्री पूरे मामले मे लिप्त थी और उनको बचाने की कोशिश लगातार सरकार करती रही। १० साल की बच्ची से लेकर १६ साल की लडकियों के साथ लगातार बार्बर, अकाल्पनिक यौन हिंसा, बलात्कार और देह व्यपार सीएचएल रहा था। जिस बच्ची ने इंकार किया उसे वही मार के दफना दिया गया ।

मैं उन बच्चियों को अपनी आंखो के सामने देख रही हुँ। उनके सारे पंख लहु लुहान हैं। वे दबी जुबान से चीख रहीं हैं। एक लेखक के लिए इससे ज्यादा शर्म की क्या बात होगी कि बार बार उसे अमानवीय घटनाओं से गुज़रना पड़े। बालिका गृह की ४४ लडकियों में से ३४ लडकियों के साथ बलात्कार हुआ। उन्हें इंजेक्शन दिए गए, हंटरो से पीटा गया, देह व्यपार के लिए बाहर भेजा गया, सिगरेट से जलाया गया और लोहे को गर्म कर दागा गया।

मैं जिस दुनिया का सोग मना रही हुँ वो पहले से दागदार और बीमार है। बच्चियों के बदन से मास के नोचे जाने का खेल नया नहीं है। सत्ता और अश्लील पूंजी का ये खेल सदियों से जारी है। ये वीभत्स विचारधारा बैठकों में, बदबूदार बिस्तरों में जन्म लेती है। हमारा सामान्य व्यवहार, हमारा समाज, हमारे सपने तक आरंजित हैं ।

लडाई आसन नहीं थी। घटना जब अखबारों के साथ बाहर आई तो बिहार में पहली बार सभी महिला संगठनों ने मिलकर बड़ा आन्दोलन किया। यहाँ यह बता दें कि खुलासा केवल इस लिए हुआ कि टाटा इंस्टीट्यूट ऑफ सोशल साइएंसेस (TISS) मुंबई के शोधकारों को बालिका संरक्षण गृहो का सर्वेक्षण सौंपा गया था। मुजफ्फरपुर के संरक्षण गृह मे लड़कियों की हालत देखकर, सर्वेक्षण करने वाले विचलित हो गए। उन्होने मौका पाकर, कुछ लड़कियों से पूछ ताछ की और जो कुछ उन्होने सुना उसकी सूचना उन्होने दूसरों के साथ साझा की। इस तरह, कई सालों से हो रहे वीभत्स अत्याचार की बात बाहर निकली।

मुझे याद है जून की तपती धूप में हजारों की तादाद में महिलाओं ने पटना के डाकबंगला चौराहे को घेर लिया। वे तब तक डटी रही जबतक पुलिस उन्हें जबरन उठा कर नहीं ले गयी। ये आन्दोलन की ताकत थी कि इस मुद्दे पर बिहार के सभी प्रगतिशील महिला संगठन एकजूट हुईं। लगभग १०० संगठन सड़कों पर डटे रहे। सर पर काली पट्टी बांधकर उन्होंने सूरज की गर्मी और लूँ के थपेड़ो को सहते हुए आन्दोलन को विस्तार दिया। नितीश सरकार की सत्ता हिल गयी और उसे इस मामले को सीबीआई को सौपना पड़ा ।। दलालों, सत्ता और पूंजी के बड़े नेटवर्क से ये धंधा चल रहा था। सरकार का दबाब इतना था की पटना हाई कोर्ट तक को ये फरमान जारी करना पड़ा कि इस खबर को सिर्फ सीबीआई के हवाले से लिखा जा सकता है। ये फैसला प्रेस की आजादी को कुंद कर रहा था, उस पर नियन्त्रण कर रहा था।

प्रेस की आजादी पर हो रहे इस हमले के खिलाफ किसी भी मीडिया संस्थान ने आवाज नहीं उठाई। वे जानते थे की अगर वे सरकार और कोर्ट के खिलाफ गए तो उनको मिलने वाले करोड़ों के सरकारी विज्ञापन से उन्हें वंचित होना पड़ेगा। मेरे लिए सरकार के इस फरमान को स्वीकार करना असहनीय था । पत्रकारिता के साथ लंबा समय मैंने गुज़ारा था और उसकी आजादी पर अंकुश मुझे मंजूर नहीं थी। मैंने इसके खिलाफ सुप्रीम कोर्ट में याचिका दायर की । मेरी वकील, फौजिया शकील, ये लडाई मेरी तरफ से लड़ रही थी। सुप्रीम कोर्ट ने पटना हाई कोर्ट के फैसले को खारिज किया और पटना हाई कोर्ट के ब्लैंकेट बैंन के खिलाफ अपना फैसला दिया। ये मेरी पहली जीत थी। लेकिन लडाई लंबी थी। सीबीआई को सिर्फ मुजफ्फरपुर मामले की जाँच करने का मामला सौपा गया था जबकि टाटा इंस्टिट्यूट ऑफ सोशल साइंस (TISS) ने बिहार के १७ बालिका गृह में भयानक शोषण और यौन हिंसा की रिपोर्ट सरकार को सौपी थी ।

मेरे द्वारा दायर पी आई एल के बाद बिहार के १७ बालिका गृह को जाँच के घेरे में लिया गया । मुझ पर काफी दबाव थे केस वापस करने के लिए। कई तरफ से मुझे घेरा जा रहा था। मैं जानती थी की इस तरह के संघर्ष में बहुत कुछ खोना पड़ता ह। पर मेरी जिद थी कि बच्चियों को इस हिंसा और शोषण से मुक्ति दिलानी है।

सीबीआई का पिछला इतिहास हमसब जानते हैं। अधिकांश मामलो में सीबीआई न्याय के साथ नहीं खडी होती है। इस मामले में भी उसनें बड़े अपराधियों और रसूख वाले लोगों को बचाना शुरू किया था। मैंने कोर्ट में फिर से पिटीशन दायर किया और आरोप लगाया की सीबीआई बच्चियों के बयान के आधार पर जाँच नहीं कर रही है

और सफेदपोश लोगों को बचाया जा रहा है। सुप्रीम कोर्ट ने एकबार फिर सीबीआई को लताड़ा और बच्चियों के बयांन के आधार पर जाँच करने और तीन माह के अन्दर रिपोर्ट सौपने का निर्देश दिया। मेरे अपील पर कोर्ट के इतिहास में पहली बार सीबीआई के मुख्य निदेशक को सुप्रीम कोर्ट ने सजा दी। इस आन्दोलन ने न्याय के दुर्गम रास्ते पर चंलना सिखाया। मुझे इस बात की ख़ुशी है की इस लंबे संघर्ष के बाद बच्चियों के साथ हुए अमानवीए हिंसा के खिलाफ न्याय का रास्ता खुला। अभी पूरा न्याय नहीं मिला है। हम लड़ेंगे और जीतेंगे। मैं ये भरोसा कर पा रही हुँ कि न्याय के लिए लड़ना ही अंतिम रास्ता है।

'लवजिहाद' के नाम पर उत्पीड़न

नीलम तिवारी

प्रेमविवाह आजकल के माहौल मे एक स्वाभाविक घटना हो गई है जिसमे युवक युवती अपनी पसंद के अनुसार अपने लिए जीवन साथी का चुनाव करते है लेकिन जब युवती हिन्दू हो और युवक मुस्लिम तब उसे हिंदुत्ववादी 'लवजिहाद' का नाम देकर उसे एक साजिश के हिस्से के रूप मे प्रस्तुत करते हैं। इस तरह की बातें सबसे अधिक उत्तर प्रदेश के मुख्य मंत्री योगी आदित्यनाथ कर रहे हैं। हाल मे कानपुर और कुछ अन्य शहरों की घटनाओं को लेकर पूरे समाज मे सांप्रदायिक ध्रुवीकरण करने की ज़बरदस्त कोशिश की जा रही है।

24 अगस्त 2020 अमरउजाला माईसिटी न्यूज पेपर के द्वारा जानकारी दी गयी कि कानपुर शहर की बर्रा निवासी शालिनी यादव ने जुही लाल कालोनी निवासी मोहम्मद फैसल से प्रेम विवाह कर लिया है। इस घटना के विरोध मे दक्षिण पंथी हिन्दुत्व वादी संगठन विषेश रूप से बजरंग दल के लोग भारी संख्या मे सड़कों पर विरोध प्रदर्शन करने के लिए उतर आये उन्हे हिन्दू धर्म खतरे मे नजर आने लगा।युवती के परिजनो ने मुस्लिम युवक पर अपनी लडकी को बहला फुसलाकर जबरन धर्म परिवर्तन करके शादी करने का आरोप लगाया साथ ही युवती पर घर से 10 लाख रुपए लेकर भागने का आरोप लगाया गया है।

यह सारी गतिविधियां उस समय तेज हुई जब युवती ने शादी के बाद एक वीडियो बना कर सोशल मीडिया पर साझा किया। उस वीडियो मे उसने कहा कि मेरा भाई मुझे व मेरे पति को जान से मारने की धमकी दे रहा है तथा मेरे ससुराल वालो को भी धमका रहा है यदि मुझे या मेरे पति को और उसके घर वालों के साथ किसी भी तरह की दुर्घटना हो जाती है तो उसके लिए मेरे भाई को जिम्मेदार ठहराया जाये। मै बालिग हुं। मैने यह शादी अपनी मर्जी से की है और मै अपने पति के साथ शांति से रहना चाहती हुं।युवती ने अपनी एवम् अपने पति की सुरक्षा की मांग प्रशासन से की।

यह सारी बाते जब हमारे संज्ञान मे आयी तब कानपुर एडवा की कार्यकारिणी ने आपस मे विचार-विमर्श करके यह निर्णय लिया कि उस युवती एवम् युवक की सुरक्षा निश्चित की जानी चाहिए।इन सभी बातों को नजर मे रखते हुए 25 अगस्त 2020 को कानपुर एडवा ने इस विषय पर अपना हस्तक्षेप दर्ज कराते हुए सबसे पहले एक ज्ञापन एस एसपी कानपुर नगर को इस घटना की पूरी जानकारी देते हुए भेजने का काम किया जिसमे विषेश रूप से

दंपति की सुरक्षा की मांग को रखा गया ।इसके बाद प्रेस को भी इस घटना की जानकारी देते हुए प्रेस विज्ञप्ति भेजी गई ।

28 अगस्त की खबर से पता चला कि पुलिस प्रशासन ने युवती के घरवालों से कहा कि युवती बालिग है और उसने शादी करने के बाद दिल्ली के तीसहजारी कोर्ट मे 164 के तहत लिखित बयान दर्ज करा दिए है अब पुलिस प्रशासन इस विषय मे हस्तक्षेप नही करेगी यदि आपको साक्ष्य चाहिए तो आप कोर्ट की मदद ले सकते हैं।इन सभी बातों की पुष्टि थाना प्रभारी धनेष कुमार एवं एसपी साउथ दीपक भूकर ने की है।

कानपुर के समाचार पत्रों मे इस घटना के अलावा और भी तमाम घटनाओं का लगातार ज़िक्र आ रहा है। यह दिखाने की कोशिश की जा रही है कि एक बड़ी साजिश के तहत, मुस्लिम लड़के हिन्दू लड़कियों को फंसा रही हैं। जहां एक तरफ मुस्लिम समाज पर तमाम इल्जाम लगाए जा रहे हैं, वही हिन्दू लड़कियों को बिलकुल बेवकूफ और नासमझ होने का आरोप लगाया जा रहा है। यह मामले अधिकतर दोनों पक्षों की सहमति से किसी रिश्ते को स्वीकार करने के ही मामले लगते हैं लेकिन घरवालों की आपत्ति और सरकार और उनके साथ जुड़े सांप्रदायिक संगठन इनको दूसरे रंग मे रंगने पर तुले हुए हैं।

इस महामारी के दौरान तमाम पाबंदियों के चलते हम सड़कों पर उतर कर विरोध नही दर्ज कर पाये लेकिन हमने अपनी बात प्रशासन तक पहुंचाने का काम किया। हमने अपने मोबाइल नंबर भी सोशल मीडिया पर साझा किये हैं महिलाओ के साथ होने वाली हिंसा एवं दुर्घटनाओं की जानकारी मिलने पर हम हमेशा उनके साथ हैं क्योंकि हम मानते हैं कि बालिग युवती को अपना जीवन साथी चुनने का पूरा अधिकार है।

फॉलो करे **:**

फेसबुक**: https://www.facebook.com/AIDWA/**

वेबसाइट**: http://www.aidwaonline.org**